Con. 3. X.2.49
320

अंक 10
संख्या 3

शुक्रवार
10 अक्तूबर
सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

	पृष्ठ
शपथ ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर	2713
संविधान का प्रारूप-(जारी)	
[अनुच्छेद 306, 309, नये अनुच्छेद 310-क, 310-ख, 311-क, 311-ख, अनुच्छेद 312, नये अनुच्छेद 312-क से 312-ङ, 312-छ, 312-ज और अनुच्छेद 313 पर विचार]	2713-2824

भारतीय संविधान सभा

सोमवार, 10 अक्तूबर, 1949

भारतीय संविधान सभा कांस्टिट्यूशन हाल, नई दिल्ली, में प्रातः दस बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत हुई।

शपथ ग्रहण तथा रजिस्टर पर हस्ताक्षर

निम्नलिखित सदस्य ने शपथ ग्रहण की और रजिस्टर पर इस्ताक्षर किये:–

श्री हीरा वल्लभ त्रिपाठी (संयुक्त प्रान्त: जनरल)

संविधान का प्रारूप (जारी)

नवीन अनुच्छेद 283-क

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेदों पर विचार रखेंगे। अनुच्छेद 283क–श्री मुंशी।

***श्री के.एम. मुंशी** (बम्बई: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं नवीन अनुच्छेद 283-क पेश करता हूं जो दूसरे सप्ताह की सूची में शामिल है। जिस अनुच्छेद को मैं सभा के सम्मुख प्रस्तुत कर रहा हूं। उसका पाठ इस प्रकार है:

Provision for protection of existing officers of certain services.

"283A. Except as otherwise expressly provided by this Constitution, every person who, being a member of a Service specified in clause (2) of article 282-B of this Constitution or a service which was known before the commencement of this Constitution as an All India service, continues on and after such commencement to serve under the Government of India or of a State shall be entitled to receive from the Government of India and the Government of the State which he is from time to time serving, the same conditions of service as respects remuneration, leave and pension, and the same rights as respects disciplinary matters or rights as similar thereto as changed circumstances may permit as that person was entitled to immediately before such commencement."

कतिपय सेवाओं के विद्यमान अधिकारियों के संरक्षण के लिये उपबंध।

["283क. इस संविधान द्वारा स्पष्टतापूर्वक उपबंधित अवस्था को छोड़कर प्रत्येक व्यक्ति को, जो इस संविधान के अनुच्छेद 282-ख के खण्ड (2) में उल्लिखित किसी सेवा अथवा इस संविधान के प्रारम्भ से पूर्व अखिल भारतीय सेवा के रूप में जानी जाने वाली सेवा का सदस्य होने के नाते, इस संविधान के प्रारम्भ पर और पश्चात् भारत की या किसी राज्य की सरकार के अधीन सेवा में बना रहता है, भारत सरकार और राज्य की सरकार से, जिसकी सेवा वह समय-समय पर करता रहता है, पारिश्रमिक, छुट्टी और निवृत्ति-वेतन के

---

* इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेज़ी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[श्री के.एम. मुंशी]

बारे में उन्हीं सेवा शर्तों का तथा अनुशासनीय विषयों में बारे में उन्हीं अधिकारों का अथवा उनके तुल्य ऐसे अधिकारों का, जैसे कि परिवर्तित परिस्थितियों में सम्भव हों, हक होगा, जिनका कि उस व्यक्ति को ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले हक था।"]

महोदय, जैसा कि माननीय सदस्य पायेंगे, जो मूल प्रारूप परिचालित किया गया था, उसमें लिम्नलिखित शब्द रखे गये थे:

"इस संविधान के अनुच्छेद 282-ख के खण्ड (2) में उल्लिखित सेवा अथवा इस संविधान के प्रारम्भ से पूर्व अखिल भारतीय सेवा के रूप में जानी जाने वाली सेवा का सदस्य रहा है।"

इसमें सिविल कर्मचारियों का बहुत बड़ा वर्ग शामिल था और अब उसे भारत में क्राउन की सिविल सेवा के सदस्यों तक ही सीमित कर दिया गया है जो इस संविधान के प्रारम्भ पर और उसके पश्चात् भारत सरकार या किसी राज्य सरकार के अधीन सेवारत रहते आये हैं। इसलिए इसमें कोई वास्तविक अन्तर नहीं है सिवाय इसके कि स्वतंत्रता अधिनियम द्वारा सिविल सेवा के कतिपय सदस्यों को दी गई गारंटी जारी रखी गयी है और मूल रूप से प्रस्तुत खण्ड के व्यापक अभिप्रेत अर्थों को अब सीमित कर दिया गया है।

इस संबंध में, मैं सभा का ध्यान इस ओर दिलाना चाहता हूं कि ब्रिटिश सरकार के साथ राष्ट्र के जिन नेताओं ने बातचीत की थी उनके द्वारा 15 अगस्त, 1947 से पूर्व दी गई कतिपय गारंटियों को ध्यान में रखते हुए कुछ आश्वासनों को स्वतंत्रता अधिनियम की धारा 10 में स्थान दिया गया। स्वतंत्रता अधिनियम की धारा 10 (2) इस प्रकार है:

मैं केवल विषय से सम्बन्धित भाग को पढ़ रहा हूं:

"प्रत्येक व्यक्ति जो सेक्रेटरी ऑफ स्टेट या सेक्रेटरी ऑफ स्टेट इन कौंसिल द्वारा भारत में क्राउन की किसी असैनिक सेवा में नियुक्त होने के पश्चात् नियम दिन पर और उसके पश्चात् या तो नई डोमिनियनों का किसी प्रान्त अथवा उसके भाग की सरकार के अधीन सेवारत रहता है।"

(ख) इस अनुच्छेद के प्रयोजन के लिये महत्वपूर्ण नहीं है–

"उसको डोमिनियन सरकारों और प्रान्तीय अथवा उनके भागों की सरकारों से, जहां वह समय-समय पर सेवारत रहा हो, यथास्थिति... प्राप्त करने का अधिकार होगा"

उन्हीं शब्दों को अनुच्छेद 283-क में रखा गया है। वस्तुत: यह स्वतंत्रता अधिनियम की धारा 10 के खण्ड 2 (क) का ही पुन: प्रस्तुतीकरण है और उन आश्वासनों पर आधारित है जो हमारे राष्ट्रीय नेताओं द्वारा 15 अगस्त से पूर्व और हमारी सरकार द्वारा समय-समय पर दिये गये हैं। इसलिये मेरा निवेदन यह है कि इस अनुच्छेद को स्वीकार कर लिया जाये।

***अध्यक्ष:** इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में अनेक संशोधन प्राप्त हुए हैं। 124-श्री कामत।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, आज डॉ. अम्बेडकर दिखाई नहीं दे रहे और ऐसा लगता है कि उनकी तबीयत ठीक नहीं है.....

***अध्यक्ष:** वह कहीं और व्यस्त हैं।

***श्री एच.वी. कामत:** मैं संशोधन संख्या 124 से 131 तक प्रस्तुत करता हूं।

***अध्यक्ष:** आपको उन्हें ऐसे पढ़ने की आवश्यकता नहीं है। आप अपने संशोधनों को शामिल करके इस अनुच्छेद को पढ़िये।

***श्री एच.वी. कामत:** यदि मेरे द्वारा प्रस्तावित संशोधनों को सभा द्वारा स्वीकार कर लिया गया तब यह अनुच्छेद 183-क इस प्रकार पढ़ा जायेगा:

"Except as otherwise provided by this Constitution, every person who, having been appointed by the Secretary of State or the Secretary of State in Council to the Civil Service of the Crown in India continues on and after the commencement of this Constitution to serve under the

---

"124. कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में, 'expressly (स्पष्टतापूर्वक)' **शब्द निकाल दिया जाये।**

125. कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क की पंक्ति 9 में, 'and (और)' **शब्द के स्थान पर** 'or (अथवा)' **शब्द रखा जाये।**

126. कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह)' के संशोधन संख्या 1 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में, 'which he is from time to time serving' (जिसकी सेवा वह समय-समय पर करता रहता है)' **शब्दों के स्थान पर** 'as the case may be (यथास्थिति)' **शब्द रखा जाये।**

127. कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह)' के संशोधन संख्या 1 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में, 'the same conditions (उन्हीं सेवा शर्तों)' **शब्दों के स्थान पर** 'conditions (शर्तों)' **शब्द रखा जाये।**

128. कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह)' के संशोधन संख्या 1 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में, 'remuneration (पारिश्रमिक)' **शब्दों के स्थान पर** 'salary (वेतन)' **शब्द रखा जाये।**

129. कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह)' के संशोधन संख्या 1 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में, 'and the same rights (उन्हीं अधिकारों)' **शब्दों के स्थान पर** 'and rules (और... नियमों)' **शब्द रखा जाये।**

130. कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह)' के संशोधन संख्या 1 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में, 'as respects disciplinary matters or rights (अनुशासनीय विषयों के बारे में उन्हीं अधिकारों का अथवा उनके तुल्य ऐसे अधिकारों का)' **शब्दों के स्थान पर** 'of conduct and discipline (आचरण तथा अनुशासन के)' **शब्द रखे जायें।**

131. कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह)' के संशोधन संख्या 1 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में, 'as similar thereto as changed circumstances may permit as that person was entitled to immediately before such commencement' **शब्दों के स्थान पर** 'as similar, as changed circumstances may permit to what that person was entitled to immediately before such commencement' **शब्द रखे जायें।**

[श्री एच.वी. कामत]

Government of India or of a State, shall be entitled to receive from the Government of India or the Government of the State as the case may be, conditions of service as regards salary, leave and pension and rules of conduct and discipline, as similar as the changed circumstances may permit, to what that person was entitled to immediately before such commencement."

["इस संविधान द्वारा उपबंधित अवस्था को छोड़कर प्रत्येक व्यक्ति को, जो सेक्रेटरी ऑफ स्टेट या सेक्रेटरी ऑफ स्टेट इन कौंसिल द्वारा भारत में क्राउन की असैनिक सेवा में नियुक्त होने के पश्चात् इस संविधान के प्रारम्भ पर और पश्चात् भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार के अधीन सेवा में बना रहता है, भारत सरकार या राज्य की सरकार से, यथास्थिति, वेतन, छुट्टी और निवृत्ति-वेतन संबंधी उन सेवा शर्तों का और आचरण तथा अनुशासन के नियमों का, जैसा कि परिवर्तित परिस्थितियों में सम्भव हो, हक होगा, जिनका कि उस व्यक्ति को ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले हक था।"]

महोदय, जब मैंने इस अनुच्छेद 283-क को पढ़ा तो मेरी पहली प्रतिक्रिया यह थी कि इस अनुच्छेद का मसौदा तैयार करने में जल्दबाजी की गयी है। इस अनुच्छेद की रचना, मेरे विचार में, बहुत ही निकृष्ट तरीके से की गयी है और यदि मैं कहूं कि इसका अन्तिम भाग बुरी तरह से गड्डमड्ड कर दिया गया है तो मैं बहुत गलत नहीं होउंगा। मैं इसकी रचना की बात कर रहा हूं और मेरे विचार में यदि इसे ऐसा ही रखा जाये तो प्रारूप समिति की और अन्ततोगत्वा सभा की, जो इसको पास करेगी, खिल्ली उड़ाई जायेगी। शायद विदेशी भाषा होने के कारण ही अशंत: ऐसा हुआ है। इसीलिये यथाशीघ्र राष्ट्रभाषा को बढ़ावा दिया जाना चाहिये जिससे हम अपनी भाषा में अपने मत को भली भांति अभिव्यक्त कर सकें।

महोदय, मेरा पहला संशोधन शाब्दिक मात्र है और मैं उसके सम्बन्ध में कुछ अधिक नहीं कहना चाहूंगा। मैं उसे प्रारूप समिति की सद्बुद्धि पर छोड़ता हूं।

मेरा दूसरा संशोधन–संख्या 125–"भारत सरकार और किसी राज्य की सरकार" शब्दों की पूर्वगामिता से सम्बन्धित है। मेरे विचार में उनका क्रम उनकी पूर्ववर्तिता के अनुसार "भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार" होना चाहिए। "और" शब्द लगाने की क्या आवश्यकता है? सही शब्द "या" होना चाहिए।

संशोधन संख्या 126 में "जिसकी सेवा वह समय-समय पर करता रहता है" के स्थान पर "यथास्थिति" शब्द रखने की बात कही गई है। यह कहना आवश्यक नहीं है कि "जिसकी सेवा वह समय-समय पर करता रहता है।" सम्भव है कि वह भारत सरकार की या किसी राज्य सरकार की सेवा में हो। परन्तु यदि आप "यथास्थिति" शब्द का प्रयोग करें तो उनका अर्थ भी उतना ही सही है और मेरे विचार में संवैधानिक शब्दावली और बोलचाल की दृष्टि से भी यह कहीं अधिक अच्छी व सुन्दर अभिव्यक्ति है।

मेरा एक अन्य शाब्दिक संशोधन है जिसमें "पारिश्रमिक" शब्द के स्थान पर "वेतन" शब्द रखने की बात कही गयी है। मेरे विचार में जहां तक असैनिक कर्मचारियों और सरकारी कर्मचारियों का संबंध है "वेतन" शब्द "पारिश्रमिक" शब्द से अधिक सम्मानजनक है। मेरे विचार में अन्य सभी अनुच्छेदों में इस अर्थ के लिये "वेतन" शब्द का ही प्रयोग किया गया है। हम न्यायाधीशों का वेतन, राष्ट्रपति का वेतन, मंत्रियों का वेतन और "विधान सभाओं के सदस्यों का वेतन और भत्ते" शब्दों का प्रयोग करते आ रहे हैं। इसलिये मेरे विचार में यहां पर भी "पारिश्रमिक" शब्द का प्रयोग न करके "वेतन" शब्द का प्रयोग करना ही उचित रहेगा।

अब मैं उस भाग का उल्लेख करना चाहता हूं जिसे बुरी तरह से गड्डमड्ड कर दिया गया है। यदि मेरे मित्र श्री मुंशी व प्रारूप समिति के उनके अन्य सहयोगी सदस्य मेरी बात को समझने का प्रयत्न करेंगे जो मैं कहने जा रहा हूं तो यदि उनके दिमाग खुले हैं और वे कोई परिवर्तन किये जाने के विरुद्ध नहीं हैं तो मुझे विश्वास है कि वे समझ जायेंगे कि क्या गलती हुई है। यहां पर प्रयुक्त भाषा बहुत ही अशुद्ध है और शब्द विन्यास भी ठीक नहीं है। सभा समझ जायेगी जब मैं अनुच्छेद के उस भाग का हवाला दूंगा जो "उन्हीं सेवा शर्तों का..." शब्दों से आरम्भ होता है और अन्त तक जाता है। परन्तु उसके सम्बन्ध में कुछ कहने से पूर्व में "receive" शब्द के बारे में कुछ कहना चाहता हूं। मुझे ऐसा कोई उचित शब्द नहीं मिला जो इसके बजाय रखा जा सके परन्तु मैं महसूस करता हूं कि इस संदर्भ में यह शब्द बिल्कुल गलत है। क्या प्राप्त करना? सेवा की शर्तें प्राप्त करना? अनुशासनीय मामलों या अधिकारी के संबंध में अधिकर प्राप्त करना? यह बहुत ही अनुपयुक्त अभिव्यक्ति है। मैंने इस संदर्भ में "receive" शब्द का प्रयोग कहीं नहीं देखा यद्यपि, दुर्भाग्य से, मैं इसके लिये कोई अन्य शब्द नहीं ढूंढ सका। फिर भी मैं प्रारूप समिति से अनुरोध करूंगा कि वे इस पर पुनर्विचार करें और मैं आशा करता हूं कि तीसरे वाचन में "receive" शब्द के स्थान पर कोई दूसरा बेहतर शब्द रखा जायेगा।

यदि सभा वाक्य के अन्तिम भाग पर ध्यान देगी तो पायेगी कि इसकी रचना कितनी भद्दी है। इसमें उन्हीं शर्तों और उसी प्रकार की शर्तों अथवा अनुशासकीय मामलों के संबंध में उसी प्रकार के अधिकारों आदि का उल्लेख है। यदि यह "उन्हीं" है तो यह वैसी ही तो हो सकती है, परन्तु "तुल्य" नहीं है। "उन्हीं" और "तुल्य" का प्रयोग एक साथ नहीं किया जा सकता। अतः इसमें से एक का लोप करना होगा। इसलिये मैंने "तुल्य" शब्द का सुझाव दिया है क्योंकि परिस्थितियों के अनुरूप शर्तें यथासम्भव "तुल्य" हो सकती हैं। मेरे संशोधन संख्या 131 और 128 अनुच्छेद के इस भाग से सम्बन्धित हैं मैंने कहना चाहा है कि इसका आशय यह है संविधान के प्रारम्भ से पूर्व जो स्थिति थी उसके तुल्य वाली बात रखी जाये, वहीं वाली नहीं। मुझे विश्वास है कि प्रारूप समिति मेरे विचार से सहमत होगी कि उनका आशय नहीं है। इसलिये यह कहना अधिक उचित होगा—उन विद्यमान शर्तों और नियमों के तुल्य जो परिवर्तित परिस्थितियों के अनुरूप हों।

संशोधन संख्या 130 अनुच्छेद के उस भाग से सम्बन्धित है जिसमें अनुशासनीय विषयों से सम्बन्धित अधिकारों अथवा अधिकारों का उल्लेख है। इससे सही-सही क्या अभिप्रेत है यह ईश्वर ही जानता है। "अधिकारों" शब्द दोहराया गया है: "अनुशासनीय विषयों के बारे में अधिकारों अथवा अधिकारों" परन्तु अनुशासनिक विषयों के सम्बन्ध में कोई अधिकार नहीं होते। अनुशासन के नियम, आचार संहिता है और अनुशासन सम्बन्धी विनियम है। परन्तु "अनुशासनिक विषयों के बारे में

[श्री एच.वी. कामत]

अधिकारों अथवा अधिकारों" से क्या तात्पर्य है? मैंने कुछ वर्ष तक सेवारत रह कर देखा है, परन्तु मुझे इस प्रकार के अधिकारों की कोई जानकारी नहीं है। केवल आचार संहिता होती है, अनुशासन सम्बन्धी अधिकार नहीं होते। मैंने इसको एक बार, दो बार, तीन बार पढ़ा और मुझे आश्चर्य हो रहा है कि क्या यह मसौदा प्रारूप समिति के विद्यमान सदस्यों ने तैयार किया है या किसी अन्य व्यक्ति ने तैयार किया है और समिति ने इसे बारीकी से नहीं देखा है।

एक बात और। श्री मुंशी ने हमें बताया है कि जब 15 अगस्त, 1947 को स्वतंत्रता अधिनियम पास किया गया था, उस समय सिविल अधिकारियों को सरकार द्वारा गारंटी दी गयी थी। इसलिये इस विषय पर कोई विवाद नहीं है। परन्तु इस पूरे अनुच्छेद का प्रारूप इतने गलत तरीके से तैयार किया गया है कि मैं अत्यंत विनम्र भाव से प्रारूप समिति से अनुरोध करना चाहूंगा कि वे इस समूचे विषय पर पुनर्विचार करें और तीसरे वाचन के समय इसे नये रूप में प्रस्तुत करें, जिसकी भाषा शुद्ध हो और रचना भी सुन्दर हो।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 132, श्री नजीरुद्दीन अहमद।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** (बिहार: जनरल): संशोधन संख्या 14 का क्या हुआ।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 14 पिछले प्रारूप के संबंध में था।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** (पश्चिम बंगाल: मुस्लिम): अध्यक्ष महोदय, मेरे कुछ संशोधन यथार्थ हैं और औपचारिक-मात्र हैं। मैं केवल उप-संख्या (तीन), (चार) और (सात) प्रस्तुत करूंगा। महोदय मैं प्रस्ताव करता हूं "कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित अनुच्छेद 283-क "continues" **शब्द के स्थान पर** "shall continue" **शब्द रखे जायें;** "shall be entitled" **शब्दों के स्थान पर** "and shall be entitled" **शब्द रखे जायें;** और "he is from time to time serving" **शब्द रखे जायें।"** इन संशोधनों का सुझाव देने का मेरा आशय यह है कि हम कुछ सेवाओं के भविष्य के लिये यह व्यवस्था कर रहे हैं। मेरे विचार में इन उपबंधों में भविष्यत्काल का उपयोग किया जाना चाहिए। परंतु इसमें सब जगह वर्तमान काल का प्रयोग किया गया है। अनुच्छेद 283-क में अनेक शर्तों का लोप करते हुए मात्र वाक्य इस प्रकार है—"प्रत्येक व्यक्ति को, जो सेकेटरी ऑफ स्टेट या सेक्रेटरी ऑफ स्टेट इन कौंसिल द्वारा भारत में क्राउन की किसी असैनिक सेवा में नियुक्त होने के पश्चात इस संविधान के प्रारम्भ पर और पश्चात भारत की या किसी राज्य की सेवा में बना रहता है...." मैंने "continues (बना रहता है)" के स्थान पर "shall continue (बना रहेगा)" शब्द रखे जाने का सुझाव दिया है। मेरा विचार यह है कि हम इन सेवाओं के सम्बन्ध में भविष्य के लिये व्यवस्था कर रहे हैं और इसलिये क्रिया का प्रयोग भविष्यकाल में होना चाहिए। अन्य संशोधन इस प्रकार के हैं और उनके संबंध में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है।

अनुच्छेद 283-क का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने के बाद ऐसा प्रतीत होता है जैसा कि श्री कामत ने कहा है कि इस अनुच्छेद का प्रारूप तैयार करने में जल्दबाजी की गयी है। श्री कामत ने प्रारूप तैयार करने की दृष्टि से एक स्पष्ट असंगति अर्थात् "receive" शब्द के प्रयोग की ओर ध्यान दिलाया है। यह शब्द बिल्कुल अनुपयुक्त है। इस सभा में पेश किये गये कुछ संशोधनों व की गयी टिप्पणियों को ध्यान में रखते हुए प्रारूप समिति को इस अनुच्छेद के प्रारूप पर पुनर्विचार करना चाहिए।

इन अनुच्छेदों पर विचार करने वाले सदस्यों को एक अन्य इस कठिनाई का सामना करना पड़ा है। इन अनुच्छेदों को कल 9.00 अथवा 10.00 बजे सायं परिचालित किया गया था और तब इन अनुच्छेदों पर विचार करने और संशोधनों का सुझाव देने का और उन संशोधनों को कल पांच बजे तक कार्यालय में देने का समय ही नहीं था। इसीलिए कुछ संशोधनों पर भलीभांति विचार नहीं किया जा सका और इसीलिए जल्दी में "receive" शब्द पर मेरा ध्यान ही नहीं गया। मेरा सुझाव यह है कि प्रारूप समिति को उस अनुच्छेद के प्रारूप पर पुनर्विचार करना चाहिए। मैंने कुछ और भी छोटे-छोटे सुधार करने के सुझाव दिए हैं जिनको मैंने प्रस्तुत नहीं किया है परन्तु मेरे विचार में प्रारूप समिति को उन पर विचार अवश्य करना चाहिए।

***अध्यक्ष:** एक संशोधन है जिसकी सूचना आज प्रात: श्री सिधवा ने दी है।

***श्री आर.के. सिधवा:** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): महोदय, मैं उसको प्रस्तुत नहीं कर रहा।

***अध्यक्ष:** अब अनुच्छेद तथा संशोधनों पर चर्चा की जा सकती है। एक या दो संशोधन ऐसे हैं जिनमें अनुच्छेद के निकाले जाने का प्रस्ताव है। मैं उनको संशोधित नहीं समझता।

***श्री महावीर त्यागी:** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): महोदय मैं सिद्धान्त रूप में इस बात से सहमत नहीं हूं कि यह संविधान सभा कोई ऐसे वचन दे जिनकी जिम्मेदारी आगामी संसदों पर आती हो। सिविल सेवा के इन कुछ लोगों के मामले में केवल कुछ गारंटियों को अन्तरित किया जा रहा है। मुझे इस पर कोई आपत्ति नहीं है परन्तु वे एक संसद से दूसरी संसद को अन्तरित की जानी चाहिए। यदि इस विधान सभा ने अब इन गारंटियों की पुष्टि कर दी तो आगामी संसदों के लिए यह अविरल दायित्व बन जायेगी। इस समय मैं समझता हूं कि इस प्रस्ताव के विरोध को कोई अधिक समर्थन नहीं मिलेगा, फिर भी मैं इन गारंटियों का समर्थन करने से पूर्व कुछ प्रश्न पूछना चाहता हूं।

जैसा कि देखा जाता है, आज भारत में सिविल सेवा के कुछ अधिकारियों की सेवा केवल आठ या नौ वर्ष की हुई है और वे सेक्रेटेरियट में सचिव व संयुक्त सचिव के पदों पर कार्य कर रहे हैं और बहुत अधिक वेतन प्राप्त कर रहे हैं, इतना वेतन कि यदि भारत स्वतंत्र न हो जाता तो उनको यह वेतन अठारह या उन्नीस वर्षों की सेवा के बाद मिला होता। सिविल सेवा के अनेक अधिकारियों की पदोन्नति इतनी तेजी से हुई है। मैं पूछना चाहता हूं कि उन सचिवों का क्या होगा जो न्यूनतम गारंटीशुदा संख्या "आठ" से अधिक होंगे। जहां तक मेरी जानकारी है, सचिवों के केवल "आठ" पदों की गारंटी दी गई है। इन पदों की संख्या को आठ से सात या छ: नहीं किया जा सकता, परन्तु इस समय इक्कीस सचिव हैं। अब मूल देयता इन आठ में से प्रत्येक सचिव को 4000 रुपये प्रतिमास देने की थी। अब हम उतना ही वेतन इक्कीस सचिवों को दे रहे हैं। मैं यह जानना चाहता हूं कि क्या इस अनुच्छेद के पास हो जाने के बाद हम सचिवों की संख्या को कम करके आठ तक ला सकेंगे या नहीं? अब यदि यह भी वचन दिया जा रहा है कि आगामी सरकारों की इक्कीस सचिवों और अनेक संयुक्त सचिवों को—जिनकी संख्या गारंटीशुदा संख्या से कहीं अधिक है—विद्यमान वेतन मानों के अनुसार वेतन देना होगा—तो क्या भावी संसद के लिये यह अतिरिक्त देयता नहीं होगी? अथवा क्या भावी संसद सचिवों की संख्या कम कर सकेगी?

आज मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि स्वतंत्रता का अधिकांश लाभ सिविल सर्विस वाले लोगों को मिला है और अन्य वर्गों की स्थिति गिरी है। सिविल सर्विस वाले

[श्री महावीर त्यागी]

लोग, यदि भारत स्वतंत्र न होता तो जितना वेतन उनको मिलता उससे कहीं अधिक वेतन पा रहे हैं। मुझे पता चला है कि पाकिस्तान में एक नियम बनाया गया है कि प्रत्येक सिविल कर्मचारी को या तो स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् उसे प्राप्त हुए ऊंचे वेतनमान के हिसाब से या स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व उसे पूर्व उसे मिल रहे वेतन से केवल तीस प्रतिशत अधिक, दोनों में से जो कम हो, वेतन मिलेगा।

पाकिस्तान में ऐसा कोई सिविल कर्मचारी नहीं है जिसका वेतन 15 अगस्त, 1947 से पहले मिलने वाले वेतन से तीस प्रतिशत से अधिक बढ़ा हो। परन्तु हमारे देश में सिविल सेवा के यूरोपीय अधिकारियों की सेवानिवृत्ति और मुस्लिम अधिकारियों के पाकिस्तान चले जाने के कारण बहुत कनिष्ठ अधिकारियों की तेजी से पदोन्नति हो गई है और उन्हें ऊंचे वेतनमान मिलने लगे हैं।

मैं चाहता हूं कि श्री मुंशी इस बात को स्पष्ट करें कि इस उपबंध के पास होने जाने के बाद, क्या भारत की भावी संसद के लिये यह जरूरी होगा कि वह इतने अधिक वेतन पर उतनी ही संख्या में सचिवों को रखें अथवा वह सेक्रेटेरियट में सचिवों की संख्या में कमी कर सकेगी और उनको कम वेतन दे सकेगी। लगभग सभी राजवंशियों और जमींदारों जैसे निहित स्वार्थ वाले व्यक्तियों का प्रभुत्व समाप्त हो गया है। केवल कुछ सिविल अधिकारियों के ही निहित स्वार्थों को उनके हितों की गारंटी देकर हम अनवरत बनाए हुए हैं। क्या वे भावी संसदों के लिए अनवरत देयता बने रहेंगे?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास: जनरल): यदि मेरे माननीय मित्र अपने तर्क को संक्षिप्त करने में...

***श्री महावीर त्यागी:** मैं अपनी बात कह चुका हूं, यदि माननीय सदस्य प्रश्न के सम्बन्ध में मुझे और जानकारी देना चाहते हों तो वह कृपया यह स्पष्ट करें कि वास्तविक स्थिति क्या है।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी** (असम: जनरल): अध्यक्ष महोदय, श्री मुंशी द्वारा इस सभा के समक्ष रखे गये नये अनुच्छेद का मैं स्वागत करता हूं। मैं इसका स्वागत इसलिए करता हूं कि इस व्यवस्था से हम आचार का ऐसा स्तर बनाए रख सकेंगे जो किसी सभ्य सरकार को अपने अधीन साथ-साथ काम करने वाले सिविल सेवा अधिकारियों के साथ बनाए रखना चाहिए।

सभा में इस अनुच्छेद पर विचार करते हुए हमें इस तथ्य को ध्यान में रखना होगा कि यद्यपि हमारे देश में काफी लम्बे समय से क्रान्ति संबंधी गतिविधियां चलती रही हैं परन्तु सत्ता के हस्तांतरण का तत्काल कारण क्रांति नहीं था, एक ऐसी क्रांति जो पहले से विद्यमान हमारी प्रत्येक चीज के अस्त-व्यस्त किये जाने को न्यायसंगत सिद्ध कर दे। हमें स्मरण रखना चाहिए कि पिछली सरकार ने सत्ता को शान्तिपूर्वक तरीके से हमें हस्तान्तरित किया है, अत: हमें उनके द्वारा किये गये अनुबंधों का, यथासम्भव आदर करना चाहिए। इस मामले विशेष में न केवल उस अनुबंध का हमारे आचार पर प्रभाव परिलक्षित होना चाहिए बल्कि इसमें तो एक और भी कारण है और वह यह कि हमारे नेताओं ने गारंटी दी थी—उन नेताओं ने जिन्होंने हमारे लिए देश की स्वतंत्रता प्राप्त करने में प्रमुख भूमिका निभायी थी। चाहे हमारी कितनी भी आलोचना क्यों न की जाये, हमें अपने नेताओं द्वारा दी गई गारंटियों का सम्मान करना चाहिए और उन्हें पूरा करना चाहिए।

इस अनुच्छेद का पूर्ण रूप से समर्थन करते हुए मैं सिविल सेवा के अधिकारियों से एक विनम्र अपील करना चाहूंगा। मैं उनसे कहूंगा कि क्या उनके लिये यह उचित नहीं होगा कि हमने इस अनुच्छेद को स्वीकार करके जिस सद्भावना का परिचय दिया है वे भी उसके बदले में अपने उस वेतन को जो उन्हें दिया गया है और जो इस अनुच्छेद के स्वीकार किये जाने के कारण उनको मिलेगा कुछ प्रतिशत का परित्याग कर दें। महोदय, मुझे याद है—1931 में जब समूचे देश में छंटनी किये जाने की चर्चा चल रही थी तब आई.सी.एस. के अधिकारियों ने जिनके वेतन में भारत सरकार कटौती नहीं कर सकती थी, स्वेच्छा से अपने वेतन तथा भत्तों में कटौती कराने की पेशकश की थी। जबकि भारतीय सिविल सेवा के यूरोपीय अधिकारी इस देश के हित में ऐसा शिष्टाचार दिखा सकते थे तो मुझे विश्वास है कि भारतीय सिविल सेवा के भारतीय अधिकारी अपनी मातृभूमि के प्रति देशभक्ति की भावना प्रदर्शित करने में पीछे नहीं रहेंगे। महोदय, मेरा विचार है कि उनको ऐसा करने में तनिक भी आपत्ति नहीं होगी क्योंकि उनको याद होगा कि कांग्रेस के नेताओं ने अपनी आय का, अपने व्यवसाय का, जीवन में अपनी स्थिति का परित्याग कर दिया था और जेलों में चले गये थे, जबकि सिविल अधिकारी अपने डैस्क पर शान्तिपूर्वक अपना काम करते रहे थे, अपनी जीविका कमा रहे थे और अपना सामान्य कार्य कर रहे थे। हमने उनके ऐसा करने पर शिकायत नहीं की। यदि उस समय सिविल सेवा के सभी अधिकारी भी त्याग-पत्र दे देते तो संक्रमण काल में हमें काम चलाने में बहुत कठिनाई का सामना करना पड़ता। उस समय उनके ऐसा करने पर मुझे कोई शिकायत नहीं। परन्तु अब जबकि वे हमारे साथ स्वतंत्रता का आनन्द उठा रहे हैं, जिसके लिये उन्होंने किसी प्रकार का कोई त्याग नहीं किया था—निश्चय ही मैं सुभाषचन्द्र बोस और श्री कामत जैसे व्यक्तियों की बात नहीं कर रहा जिन्होंने देशभक्ति की भावना से ओत-प्रोत होकर अत्यन्त स्पृहणीय पद का परित्याग कर दिया था—तो मुझे आशा है कि वे अब स्वेच्छा से अपने वेतन में से कटौती करने की पेशकश करेंगे।

महोदय, इस संबंध में हमें कुछ मंत्रियों व उनके सचिवों के दर्जे की स्थिति पर विचार करना होगा। मंत्री 750 रुपये से 1000 रुपये तक वेतन ले रहे हैं, जबकि उनके इंडियन सिविल सर्विस के सेक्रेटरी 2000 रुपये से 3000 रुपये तक वेतन प्रापत कर रहे हैं। मंत्री अपनी पुरानी कार को चलाने के लिये सड़क पर धक्का लगाते हैं, क्योंकि वे नयी कार लेने की स्थिति में नहीं हैं, ये सेक्रेटरी अपनी नयी सुन्दर मोटरकार में उनके पास से गुजर जाते हैं और मंत्री के पास से केवल हाथ हिलाते हुए और "Cheerio" कहते हुए चले जाते हैं। वह मोटर रोकने का कष्ट भी नहीं उठाते क्योंकि उनके साथ बगल में उनकी सुन्दर पत्नी विराजमान होती है। अब इस प्रकार की बात दोहरायी नहीं जानी चाहिए। मंत्री और उसके सेक्रेटरी के स्तर के बीच इतना अन्तर नहीं होना चाहिए। इस स्थिति से निपटने का एक ही तरीका है, वह यह कि सभी मंत्रियों को सरकारी कार उपलब्ध करायी जाये। मैंने यह भी देखा है कि सेक्रेटरी मंत्रियों के निवास स्थान पर जाना पसन्द नहीं करते क्योंकि उस समय के मंत्री अपने घरों में उस प्रकार का फर्नीचर, आदि नहीं जुटा पाते जिस प्रकार का इंडियन सिविल सर्विस के सेक्रेटरी ले लेते हैं।

इसलिए इस अनुच्छेद को स्वीकार करते हुए मैं सिविल सेवा के अधिकारियों से एक बार फिर अपील करता हूं कि यदि वे कर सकें तो अपने बढ़े हुए वेतन का परित्याग कर दें। वे भी साधारण व्यक्ति के स्तर पर आ जाएं और जितना कर सकते हों परित्याग करें। वे जितना त्याग कर सकते हैं उतना यदि नहीं भी करते तो उन्हें विलास सामग्री का उपयोग नहीं करने देना चाहिए बल्कि उनकी

[श्री रोहिणी कुमार चौधरी]

आय को राष्ट्र के कल्याण कार्यों में लगाने के प्रयत्न किये जाने चाहिए। शिक्षा संस्थाओं के लिये दान दे दीजिए अथवा आम आदमी के उत्थान के लिये कुछ मदद कर दीजिए। मेरी यही अपील है। मैं इस अनुच्छेद का समर्थन करता हूं।

***श्री आर.के. सिधवा:** अध्यक्ष महोदय, यद्यपि मैं देश के सिविल सेवा अधिकारियों को संतुष्ट रखने की वांछनीयता में विश्वास रखता हूं, परन्तु इन सेवा अधिकारियों को संतोष की सीमा को नहीं लांघना चाहिए। इस मामले में ऐसा हुआ है। इस महान सेवा के अधिकारियों का पूरा सम्मान करते हुए, जो यथार्थ में देश की सेवा कर रहे हैं, मैं यह कहना चाहूंगा कि यदि इस अनुच्छेद को संविधान में शामिल न किया जाता तो मैं उसे अच्छा समझता, यदि हमने कोई करार किया है तो निश्चय ही हमें उस करार को निभाना है और यह मामला नेताओं व सिविल सेवा के अधिकारियों के बीच का है और यह पता चल ही जायेगा कि इसे निष्ठापूर्वक निभाया गया है। फिर इसको संविधान में शामिल करने की क्या आवश्यकता है?

फिर इस अनुच्छेद की शब्दावली भी सुन्दर नहीं है। सम्भवत: प्रारूप समिति ने इसमें प्रयुक्त शब्दों पर उचित ध्यान नहीं दिया। उदाहरण के लिए "पारिश्रमिक" शब्द को ही ले लीजिए। प्रधान मंत्री, मंत्रिगण, अध्यक्ष, उपाध्यक्ष के मामले में भी "वेतन" शब्द को प्रयोग किया गया है। परन्तु इस मामले में "पारिश्रमिक" शब्द का प्रयोग क्यों किया गया है? यह कुछ बेहतर शब्द है। यह "वेतन" से अधिक शान-शौकत वाला शब्द है। इसीलिए इसको रखा गया है। इस सेवा के अधिकारी अपने लिये कुछ असाधारण व्यवहार चाहते हैं।

फिर वे अनुशासन के सम्बन्ध में वही अधिकार चाहते हैं। अब हमें समझ में आ रहा है कि अनुशासन से क्या तात्पर्य है। इसका अर्थ नियमों की चारदीवारी में आचरण है। यहां पर शब्द जिस प्रकार से रखे गये हैं वे भावी सरकारों के लिए समस्याएं पैदा करेंगे। यह सरकार जानती है कि ये शर्तें क्या हैं, परन्तु यदि आप इनको संविधान में शामिल करेंगे और और सिविल सेवा अधिकारियों को मनमानी करने दी गई और उन्होंने अपनी शर्तों को जारी रखने के साथ-साथ उन्हीं अनुशासन सम्बन्धी अधिकारियों की भी मांग की तो भावी सरकारों को बहुत परेशानी का सामना करना पड़ेगा। मुझे पता है कि हम सिविल सेवा के अधिकारियों को वह सब कुछ देंगे जिसके लिए हम वचनबद्ध हैं। उस पर मुझे कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु मेरे विचार में उनको संविधान में सम्मिलित नहीं करना चाहिए। सेवा के अधिकारियों को हमारे नेताओं पर भरोसा रखना चाहिए कि वे अपने वचनों को निष्ठापूर्वक निभायेंगे।

हमें इस सेवा पर गर्व है। परन्तु क्या यह वांछनीय है कि वे हमारे समक्ष शर्तें रखें कि वे इन शर्तों पर काम करेंगे? यह बहुत अनुचित बात है। यदि आप इस अनुच्छेद की भाषा को पढ़ें तो आप समझ जायेंगे कि वे अपनी शर्तें रखना चाहते हैं जिन पर कि वे भविष्य में सेवा करना चाहते हैं। मैंने एक संशोधन भेजा था। मैंने उसे प्रस्तुत नहीं किया, क्योंकि मैं इस सेवा अधिकारियों को परेशानी में नहीं डालना चाहता। मेरे संशोधन में यह कहा गया है कि इस संविधान के निर्माण के पांच वर्ष बाद संसद को सेवाओं के कार्य संचालन के संबंध में कानून बनाने का अधिकार होगा। परन्तु मैंने उसे पेश नहीं किया, क्योंकि मैं नहीं चाहता कि सिविल सेवा के अधिकारी यह समझें कि हम उनके लिए कोई परेशानी खड़ी करना चाहते हैं, कि हम उन वचनों को पूरा नहीं करना चाहते जो हमने दिये

हैं। हम ऐसे राष्ट्र के नागरिक हैं जहां यह सिखाया जाता है कि यदि कोई वचन दिया जाये तो उसे निभाया भी जाना चाहिए। हमारे नेता ने हमें यही शिक्षा दी है और हम उस पर अमल करना चाहते हैं। परन्तु उसके साथ ही मैं यह भी नहीं चाहता कि सिविल सेवा के हमारे अधिकारी हमारे समक्ष शर्तें रखें। इन शब्दों के साथ, मैं आशा करता हूं कि प्रारूप समिति इस मामले पर पुनर्विचार करेगी।

***डॉ. पी.एस. देशमुख** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं इस सभा के समक्ष यह निवेदन किये बिना नहीं कह सकता कि हमारे संविधान में इस प्रकार के उपबंध का रखे रहना बिल्कुल अनुचित है। ब्रिटिश सरकार या ब्रिटिश संसद द्वारा बनाये गये संविधानों में इस प्रकार खण्ड रखा जाना ठीक और अच्छा था। परन्तु अब हम स्वतंत्र भारत का संविधान बनाने जा रहे हैं। भारतीय जन अब अपने लिये स्वयं संविधान बना रहे हैं। इन परिस्थितियों में मैं नहीं समझता कि इस प्रकार की किसी गारंटी की कोई आवश्यकता है। यदि गारंटी दी गई है, यदि हमने कोई वचन दिया है, तो वह वचन काफी होना चाहिए और वह केवल भारतीय सिविल सेवा व अन्य प्रतिज्ञाबद्ध सेवाओं के लिए ही नहीं बल्कि पूरे राष्ट्र के लिये, हम सबके लिए है। यदि हम उस वचन का आदर नहीं करते तो संविधान में सम्मिलित एक अनुच्छेद पर भरोसा करके भी राष्ट्र अथवा सिविल सेवाओं को कोई विशेष लाभ नहीं मिलेगा। आप अपने रास्ते से हटकर एक सेवा के लिए, जो वास्तव में हमारी दासता के दिनों का ही अवशेष है अलग से उपबंध करें और फिर उसे बिल्कल उसी रूप में सम्मिलित करें जैसाकि वह 1935 के अधिनियम में विद्यमान है, तो यह देखने में भी अच्छा नहीं लगता। मेरे विचार में यह बिल्कुल अनावश्यक है। मैं नहीं समझता जैसा कि श्री सिधवा ने बताया है, कि सेवाओं के अधिकारी ऐसा करने के लिए वास्तव में जोर डाल रहे हों। मैं नहीं समझता कि स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात हाल में सिविल सेवा के सभी अधिकारियों के साथ कोई परामर्श किया गया है अथवा उन्होंने अनुबंध सम्बन्धी व्यवस्था को जारी रखने के लिये कोई संकल्प पारित किया है या मांग की है कि उनका संविदागत सम्बन्ध अक्षुण्ण बना रहे। कम से कम मुझे इस बात की कोई जानकारी नहीं है। मुझे इस बात में कोई संदेह नहीं है कि यदि उनसे पूछा जाये तो संभवत: वे स्वयं सबसे पहले आगे बढ़ कर कह सकेंगे कि उनको अपने अधिकारों के लिये किसी संवैधानिक सुरक्षा की आवश्यकता नहीं है।

दूसरे, यदि वास्तव में हम इस प्रकार का कोई उपबंध रखना ही चाहते हैं तो इन शब्दों को उसमें जोड़ने की क्या आवश्यकता है—"अनुशासनीय विषयों के बारे में उन्हीं अधिकारों—उनके तुल्य ऐसे अधिकारों का जैसे कि परिवर्तित परिस्थितियों में सम्भव हों—"। मेरे विचार में इस प्रकार गारंटी तो बिल्कुल समाप्त हो जाती है। "परिवर्तित परिस्थितियों" का क्या अर्थ है? यदि परिस्थितियों में परिवर्तन से कोई सरकार विद्यमान संविदागत सम्बन्धों अथवा दिये गये वचनों में परिवर्तन कर सकती है तो गारंटी का अर्थ ही क्या रहा जाता है? अपने दिये गये वचन से पीछे हटने के लिये किसी भी समय किसी परिस्थिति का लाभ उठाया जा सकता है। मेरे विचार में हमने कुछ विलक्षण स्थिति पैदा कर ली है। एक ओर हम सिविल सेवा के अधिकारियों को संतुष्ट रखने के इच्छुक हैं और यह कहते हैं कि वे बहुत प्रतिभाशाली व्यक्ति हैं और दूसरी ओर हमने उनको जो कुछ दिया है उसे वापस ले लेना चाहते हैं। मुझे विश्वास है कि वे इन शब्दों "जैसे कि परिवर्तित परिस्थितियों में संभव हो" के उपयोग से हमारे आशय को भलीभांति समझ जायेंगे। वास्तव में 1935 के अधिनियम का अनुसरण व अनुकरण करने में हम अंग्रेजों से भी आगे निकल जाना चाहते हैं। भारतीय सिविल सेवा मूलत: अंग्रेजों

[डॉ. पी.एस. देशमुख]

ने ब्रिटिश कार्मिकों से बनाई थी और वे प्रत्येक अवस्था में, ज्यों-ज्यों भारतीय लोगों के राजनीतिक अधिकारों की बात आगे बढ़ती, उन लोगों के लिये अधिक से अधिक गारंटी चाहते थे जो उनके देश से आये थे और इस देश में सेवारत थे। मुझे विश्वास है कि कोई भी सेक्रेटरी ऑफ स्टेट किसी भी समय भारतीय कार्मिकों में उतनी ही रुचि नहीं रखता। उनकी रुचि ब्रिटिश कार्मिकों में ही थी और ये गारंटियां उन्हीं ब्रिटिश कार्मिकों के लिये ही थीं। मुझे विश्वास है कि कोई भी भारतीय इतना देशभक्तिहीन नहीं होगा कि वह संवैधानिक गारंटी की मांग करे और न ही वह इतना अनजान होगा कि उसको पता ही न हो कि उस मामले में हमारी सरकार का दृष्टिकोण क्या होगा, कि उसको इस प्रकार दी गई गारंटी पर अधिक विश्वास हो, विशेषकर तब जब कि हम "जैसे कि परिवर्तित परिस्थितियों में सम्भव हों" शब्द जोड़ कर इस अनुच्छेद के समूचे प्रभाव को ही समाप्त कर रहे हैं। वास्तव में सिविल सर्विस का इतिहास क्या है और उनके साथ किये गये करारों का मूल्य ही क्या है? इतिहास से पता चलता है कि यद्यपि सिविल सेवा दृढ़ इरादे वाले लोगों की सेवा मानी जाती थी तथा भारत सरकार और सिविल सेवा के बीच संविदागत संबंध सर्वदा अलंघ्य माने जाते थे परन्तु कम से कम एक अवसर ऐसा अवश्य आया जब इस करार की शर्तों का पूरी तरह उल्लंघन किया गया।

वर्ष 1931 में स्वयं उसी ब्रिटिश सरकार को कुछ सख्ती करनी पड़ती और उन्होंने 10 प्रतिशत की कटौती की और ऐसा परिस्थितियों में परिवर्तन के आधार पर किया गया। कुछ लोगों ने इसे स्वैच्छिक कटौती का रंग देने का प्रयत्न किया। वास्तव में करार की अलंघ्यता वर्ष 1931 में परिस्थिति की आकस्मिकता के आगे टिक नहीं सकी। विगत समय में जो कुछ हुआ, उस सबको ध्यान में रखते हुए यह कहा जा सकता है कि करार विषयक यह सम्बन्ध समय-समय पर बदल सकते हैं और इसलिए मैं इस अनुच्छेद को संविधान में सम्मिलित करना बुद्धिमत्तापूर्ण अथवा आवश्यक नहीं समझता। यदि गारंटी दिया जाना आवश्यक है तो जो भी गारंटी अपेक्षित है, वह हमने पहले ही दे रखी है। वह वापस नहीं ली गयी है। किसी भी व्यक्ति ने यह सुझाव नहीं दिया है कि उसे वापस ले लिया जाये या कम कर दिया जाये और मेरे विचार में सिविल सेवा के लिये यह पर्याप्त होना चाहिये।

महोदय, एक अन्य कारण भी है और वह यह है कि "जैसे कि परिवर्तित परिस्थितियों में सम्भव हो" शब्दों को रखकर इस अनुच्छेद को सम्मिलित करने से एक नयी समस्या पैदा हो जायेगी जो इस समय विद्यमान नहीं है। इस समय हम वित्तीय संकट से गुजर रहे हैं। सम्भव है कि अब से आगामी लगभग तीन महीने के भीतर 1500 रुपये अथवा इससे अधिक वेतन पाने वाले सभी लोगों के वेतन में कटौती करनी पड़े। वास्तव में हमने स्वयं वेतन आयोग के प्रस्तावों संबंधी अपने नेक निर्णय का तिरस्कार किया है। हमने उनकी सिफारिशों को स्वीकार किया गया था कि किसी भी व्यक्ति को 2200 रुपये या उसके लगभग राशि से अधिक वेतन न दिया जाये और फिर भी हमने उससे 50 से 75 प्रतिशत तक अधिक देने की व्यवस्था की है जो वेतन आयोग की सिफारिशों के अनुसार हमारे द्वारा स्वीकृत अधिकतम राशि से भी अधिक है। अतः वर्तमान वित्तीय संकट को और हमारे द्वारा स्वीकृत सिफारिशों को ध्यान में रखते हुए आगामी कुछ ही महीनों में हमारे लिए यह आवश्यक हो सकता है कि हमें संसद के समक्ष जाना पड़े और यह प्रस्ताव करना पड़े कि भारत में किसी भी व्यक्ति को इतनी-इतनी राशि से अधिक वेतन नहीं मिलेगा तब हमें अपनी कार्यवाही को उचित ठहराने

के लिए परिवर्तित परिस्थितियों के आधार का ही सहारा लेना पड़ेगा। हमें कहना पड़ेगा कि चूंकि परिस्थितियां बदल गई हैं अत: हम आपको 2000 रुपये से अधिक वेतन नहीं दे सकते। बड़े-बड़े वचन देने और बाद में उनसे मुकर जाने का क्या लाभ है। कोई लाभ नहीं, इस बात को कोई भी व्यक्ति समझ सकता है कि भारत की वर्तमान परिस्थितियां ऐसी हैं कि हम आज जिस हिसाब से सिविल सेवा के कार्मिकों को वेतन दे रहे हैं आगे उस हिसाब से नहीं दे सकते। जब हम इन कठिनाइयों का सामना कर रहे हैं तब संविधान में ऐसे वचन को सम्मिलित करने से क्या लाभ होगा, जिसे हम पूरा नहीं कर सकते? अत: मेरा निवेदन है कि इस अनुच्छेद पर पुनर्विचार किया जाये और जहां तक सम्भव हो, इसे रोक लिया जाये। यदि सिविल सेवा के अधिकारी गारंटी दिये जाने पर जोर देते हैं तो उन्हें अवश्य दीजिए, परन्तु उसको इस प्रयोजन के लिये संविधान में सम्मिलित करने की आवश्यकता नहीं है।

***श्री एम. अनन्तशयनम आयंगर** (मद्रास: जनरल): इस विषय में मेरे विचार भी उतने ही तीक्ष्ण हैं जितने कि डॉ. देशमुख व मेरे अन्य सहयोगियों के हैं। मैं इस बात से निश्चय ही सहमत हूं कि यद्यपि संतुष्ट सिविल सेवा किसी देश के प्रशासन की आधार-स्तम्भ होती है, परन्तु यह सेवा विशेष जिसके लिये हम यह उपबंध करना चाहते हैं पिछले शासन की असाधारण शक्ति से युक्त सेवा थी और आगामी कुछ समय तक भी यह असाधारण शक्ति से युक्त सेवा ही बनी रहेगी। हम इस देश की आम जनता को खाना और कपड़ा उपलब्ध कराने की गारंटी नहीं दे पाये हैं। प्रशासन में अधीनस्थ वर्ग के लिए भी हमने कोई गारंटी नहीं दी है। पिछले दिनों हमने कुछ अनुच्छेद पास किये थे जिनके माध्यम से संविधान में यह कहा गया कि राज्य के सभी कर्मचारी सरकार के प्रसाद पर्यन्त ही पद धारण करेंगे। जो गारंटी हम इस अनुच्छेद के अन्तर्गत दे रहे हैं वह एक असाधारण गारंटी है। इस गारंटी का तात्पर्य यह है कि ये पिछली सरकार के समय शासक थे और इस सरकार के समय भी शासक बने रहेंगे। यह गारंटी हमसे यह भूल जाने के लिए कहती है कि ये लोग, जिनमें से आज भी लगभग 400 सेवा में हैं, यह सोचकर ज्यादतियां करते रहे हैं कि यह देश उनका नहीं है।

यह गारंटी उन लोगों को गारंटी देती है जो विदेशियों के हाथों की कठपुतली बने रहे थे। मेरे मित्र श्री कामत और उन जैसे कुछ अन्य मित्रों ने, जिनमें अपने दृढ़ विश्वास के अनुसार कार्य करने की हिम्मत है, इस देश की खातिर अपने पद त्याग दिये। वे सभी सम्मान योग्य व्यक्ति हैं जिन्होंने उस समय हिम्मत की और अपने भाग्य को इस देश की आम जनता के साथ जोड़ दिया जो स्वतंत्रता प्राप्ति के लिये जबरदस्त संघर्ष कर रही थी। यह श्रेय इस सेवा को नहीं मिल सकता। उन्होंने उन्हें मिलने वाले धन और वेतन की अधिक परवाह की। यूरोपीय सरकार, जो कुछ समय पूर्व तक हमारी शासक रही, इस देश में किसी नागरिक की निष्ठा पर भरोसा नहीं कर सकती थी, क्योंकि उनकी निष्ठा और हमारी निष्ठा अलग-अलग थी, वे हमारे देश से भिन्न देश के थे और इसीलिए उनकी निष्ठा भिन्न थी। इस देश के किसी नागरिक की इंग्लैंड के बादशाह के प्रति निष्ठा को धन से ही खरीदा जा सकता था। इसलिए उन्होंने जो वेतन दिए और वेतनमान निर्धारित किए उनकी कोई सीमा नहीं थी। गवर्नर जनरल का वेतन 21,000 रुपये प्रति मास रखा गया, गवर्नर का 10,000 रुपये प्रति मास और सेक्रेटरी का 4,000 रुपये प्रतिमास रखा गया—जो हमारी राष्ट्रीय आय के अनुपात से कहीं अधिक था।

हमारी राष्ट्रीय आय 100 रुपये प्रति वर्ष से अधिक नहीं है, जबकि ग्रेट ब्रिटेन की राष्ट्रीय आय 1200 रुपये प्रतिवर्ष है। अमरीका की स्थिति भिन्न है। जहां तक वेतनों का सम्बन्ध है, वे सिविल सर्विस के अधिकारियों को विश्व के अन्य भागों

[श्री एम. अनन्तशयनम आयंगर]

में दिये जाने वाले वेतनों की अपेक्षा हमारे देश में बहुत अधिक हैं। जहां तक राष्ट्रीय आय का सम्बन्ध है हमारी राष्ट्रीय आय सबसे कम है। पिछली ब्रिटिश सरकार को अपनी सेवा के लिये उन लोगों को खरीदना पड़ा। हमारे सर्वाधिक प्रतिभाशाली व्यक्ति अलग कर लिये गये और, चाहे उनका जन्म कहीं का भी हो और चाहे उनमें देशभक्ति की भावना थी या नहीं थी, पिछली सरकार ने उनसे वे सभी काम करवाये जो वे करवाना चाहती थी।

परन्तु मैं सभा के माननीय सदस्यों से कहना चाहता हूं कि वे कुछ बातों को ध्यान में रखें जो हमारे लोगों को करनी पड़ीं। जो व्यक्ति हमारे नेता है और जिन्होंने इस देश की स्वतंत्रता प्राप्त की है वे कहते हैं कि उन्होंने सामूहिक रूप से और व्यक्तिगत रूप से इनमें से प्रत्येक व्यक्ति को गारंटी दी है, चूंकि यह ब्रिटिश सरकार द्वारा हमारे हाथों में सत्ता सौंपने के लिए एक शर्त थी। वे विशेषकर यूरोपीय अधिकारियों के हितों के लिये भारतीय अधिकारियों के हित के लिये तो इतना नहीं, ये शर्तें चाहते थे। सम्भवत: भारतीय नौकरशाहों के हितों की रक्षा करना चाहते थे क्योंकि वे उनके प्रति निष्ठावान रहे थे और वे नहीं चाहते थे कि हमारी सरकार बनने के बाद उनको किसी कठिनाई का सामना करना पड़े। मैं इस संविधान में ऐसा कोई उपबंध रखने के पक्ष में नहीं हूं। हम बाद में इसको संसद के किसी अधिनियम में शामिल कर सकते हैं। परन्तु इसे विनियमित करने की शक्ति हमारे पास रहनी चाहिए। ये लोग इस देश के सर्वसत्ताधारी बनते जा रहे हैं।

मुझे इन सब बातों की जानकारी है, परन्तु परस्पर दोषारोपण से कोई लाभ नहीं है जबकि हमारे अपने बड़े जिम्मेदार नेताओं ने जिन्होंने स्वतंत्रता प्राप्ति के लिये अपना जीवन लगा दिया, यह आश्वासन दे दिया है। यह नहीं कहा जाना चाहिए कि हमने इस मामले में हस्तक्षेप किया और इस आश्वासन से मुकर गये। यदि मैं इस खण्ड का समर्थन करता हूं तो केवल इसी भावना से ही कर रहा हूं। मैं इस भावना से ऐसा नहीं कर रहा हूं कि इन सब लोगों ने हमारे समय में स्वतंत्रता प्राप्ति के लिये हमारे देश की सेवा की है। मैं यह कह सकता हूं कि जो माननीय सदस्य अभी भी इसका विरोध कर रहे हैं, जो कि बिल्कुल सही भी है, वे यह सांत्वना रख सकते हैं, वे यह समझ सकते हैं कि इस खण्ड के मूल प्रारूप में प्रयुक्त शब्दावली पर उनकी आपत्ति बिल्कुल सही है। परन्तु बाद में जो संशोधन किया गया है वह अधिक व्यापक नहीं है। मैं माननीय सदस्यों का ध्यान द्वितीय सप्ताह की सूची 2 में दिये गये संशोधन संख्या 11 की ओर दिलाना चाहूंगा। बाद में उसके स्थान पर सूची 1 में सम्मिलित संशोधन संख्या 1 को रखा गया है और हमने इसमें थोड़ा-सा ही परिवर्तन किया है। यह संशोधन भारत स्वतंत्रता अधिनियम द्वारा अनुकूलित भारत शासन अधिनियम की धारा 247 के अनुसार है। हमारे नेताओं का भी, जिन्होंने कि गारंटी दी थी, यह आशय नहीं था कि नये संविधान के अधीन सिविल सेवा अधिकारियों को उससे अधिक विशेषाधिकार प्राप्त हों जो पिछली सरकार के समय उनको प्राप्त थे। अत: उनको कोई और विशेषाधिकार न दिये जाने के विचार से यह संशोधन पेश किया गया है। इस संशोधन में कहा गया है कि जैसा कि पिछली सरकार के समय गवर्नर जनरल को, परिस्थितियों के अनुरूप, समय-समय पर उनकी सेवा शर्तों में संशोधन करने के लिये नियम और विनियम बनाने की शक्ति प्राप्त थी, अब वही शक्ति सरकार को प्राप्त होगी। इसलिये संशोधित खण्ड के अधीन, मेरे विचार में हमें अधिक परेशानी नहीं होगी। कुछ असाधारण मामले हो सके हैं जिनमें हमें हस्तक्षेप करना पड़ सकता है, ऐसे स्थिति के लिये इसमें पर्याप्त व्यवस्था है। अत: हमें इस संबंध में अधिक भावुक होने की आवश्यकता नहीं है। निस्संदेह, इसके बिना

भी हमारा काम चल सकता था। परन्तु, इन सेवाओं को ही नहीं बल्कि अन्य व्यक्तियों को भी, जो हमें छोड़ गये हैं, दी गयी गारंटियों और आश्वासनों को देखते हुए मैं सभा के सभी सदस्यों से, जिन्होंने संशोधन प्रस्तुत किये हैं या उन पर बोले हैं, यह अनुरोध करूंगा कि वे अपने संशोधनों पर जोर न दें और इस अनुच्छेद का विरोध न करें।

महोदय, मुझे इस बात की जानकारी है कि पिछली सरकार में केवल 8 सचिव थे जिनका वेतन 4,000 रुपये था। अब उनकी संख्या बढ़कर 18 या 21 हो गई। माननीय सदस्यों को स्मरण होगा कि मेरे माननीय मित्र श्री एन. गोपालस्वामी आयंगर को सेक्रेटरियट के पुनर्गठन के लिये नियुक्त किया गया था। यह मामला अभी उनके विचाराधीन है, मुझे विश्वास है कि यद्यपि जो गारंटी दी गई है उसके अधीन 4,000 रुपये के वेतन को कम नहीं किया जाना चाहिए, परन्तु हमारे लिये इन में से प्रत्येक को सेक्रेटरी के रूप में नियुक्त करना और सचिवों की संख्या 8 से बढ़ाकर 21 कर देना अनिवार्य नहीं है। अभी भी एन. गोपालस्वामी आयंगर यह सुझाव दे सकते हैं कि हमारे देश के हित में सचिव के केवल 8 पद रहें और शेष को संयुक्त सचिव नियुक्त कर दिया जाये। ऐसा किया जा सकता है। जो लोग गारंटी दिये जाने पर जोर दे रहे हैं उन्हें स्वयं गारंटी मांगने में संकोच होना चाहिए। इस गारंटी का अर्थ क्या है कि उनको 3,000 रुपये के स्थान पर 4,000 रुपये मिलने ही चाहिए। क्या वे जीविका के लिये काम कर रहे हैं या अन्यथा भूखों मर रहे हैं? अभी तक उन्होंने कोई भावभंगी अभिव्यक्ति नहीं की है। उन्हें यह नहीं दिखाया है कि वे स्वतंत्र प्रभुसत्ता सम्पन्न गणतंत्र के नागरिक हैं। उनको भी इस गणतंत्र की प्रगति के लिये अपनी शक्ति लगानी चाहिए। हमारा विचार है कि वे अभी तक अपने ही स्वार्थ पर अड़े हैं। फिर भी हम असहाय नहीं हैं और उनकी संख्या को कम कर सकते हैं। श्री गोपालस्वामी आयंगर सचिवों के पदों की संख्या को 21 या 18 से घटा कर 8 करने के विषय में विचार कर सकते हैं। इसका गारंटी के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है।

यह सिद्ध करने के लिये मेरे पास कुछ अन्य आंकड़े भी हैं कि सिविल सेवा के अधिकारियों की संख्या में कितनी वृद्धि हो गयी है। हम जिस बहुत ही खराब समय, संकट के समय से गुजर रहे हैं उसमें यह अत्यन्त आवश्यक है कि हम अपने हाथ में शक्ति लें और कुछ अनावश्यक रूप से बनाए गए पदों की संख्या कम कर दें। पिछली सरकार के समय केवल पांच संयुक्त सचिव थे, जबकि आज हमारे पास 30 संयुक्त सचिव हैं। प्रत्येक संयुक्त सचिव को 3,000 रुपये वेतन मिलता है। मैं ये बातें केवल आपको ही नहीं बता रहा हूं बल्कि मैं उन लोगों को भी बता रहा हूं जो यह समझते हैं कि उन्हें गारंटियां दी जानी चाहियें और उनसे उन्हें लाभ होना चाहिये। आखिर सरकार की सद्भावना और आम जनता की सद्भावना सबसे विश्वस्त गारंटी है जिसे कोई व्यक्ति प्राप्त कर सकता है। इस सद्भावना के बिना यदि वे केवल अपने वेतनों पर ही जोर देते रहे तो वे उस पर लम्बे समय तक भरोसा नहीं कर सकते। महोदय, संयुक्त सचिवों की संख्या 5 से बढ़कर 30 हो गयी है।

एक बात और है, पिछली सरकार के अधीन कोई यूरोपीय 25 वर्ष की सेवा के बाद सचिव बनता था और 20 वर्ष की सेवा के बाद संयुक्त सचिव बनता था। अब चूंकि यूरोपीय अधिकारी चले गये हैं तो जो अधिकारी निचली सीढ़ी पर थे, ऐसे उप सचिव जिनका सेवा काल अभी 10-12 वर्ष का हुआ था, वे तत्काल संयुक्त सचिव बन गये हैं, क्योंकि उन यूरोपीयों की जगह खाली हो गई है। सिद्धान्त रूप में यह गलत है। हमें उनको एकाएक ज्वाइंट सेक्रेटरी नियुक्त नहीं करना चाहिए था। अब भी अधिक विलम्ब नहीं हुआ है। इस गारंटी के बावजूद हम उनसे कह

[श्री एम. अनन्तशयनम आयंगर]

सकते हैं "आपको 3,000 रुपये वेतन पाने का पात्र बनने के लिये आपकी इतने वर्ष की सेवा पूरी होनी चाहिये।" अतः हम इस अनुच्छेद को पास भी कर दें तो भी हम असहाय नहीं होंगे। इस अनुच्छेद से जो कठिनाइयां हो सकती हैं उनमें और जिस सटीकता से ये अधिकारी धनराशि का दावा कर सकते हैं उसमें श्री गोपालस्वामी आयंगर के सभापतित्व में नियुक्त समिति द्वारा की जाने वाली उपयुक्त कार्यवाही के माध्यम से कमी की जा सकती है।

इस सेवा के बारे में मैं एक और बात कहना चाहता हूं। हम उनके पक्ष में एक अपवाद बना रहे हैं। हम उनकी आदत बिगाड़ रहे हैं। परन्तु आज भी मुझे यह कहते हुए खेद होता है कि उनमें से कुछ अधिकारियों ने अपने रवैये में परिवर्तन नहीं किया है। उन्होंने अपने आपको नई स्थिति के अनुसार नहीं ढाला है। वे यह महसूस ही नहीं करते कि वे इसी देश के अभिन्न अंग हैं। हम भ्रष्टाचार के बारे में बहुत कुछ सुनते हैं। यदि किसी विभाग में भ्रष्टाचार है तो उसके लिये कौन जिम्मेदार है? यदि कोई विभागाध्यक्ष दृढ़ निश्चय कर ले कि वह भ्रष्टाचार को जड़ से उखाड़ फेंकेगा तो क्या वह ऐसा कर नहीं सकता? क्या मैं अथवा कोई मंत्री—जिसको प्रशासन के कार्य संचालन की कोई जानकारी नहीं है, इसकी जांच कर सकता है? सिविल सेवा अधिकारी अपने पदों पर कार्यरत रहने का दावा कर सकते हैं क्योंकि उनको अनुभव प्राप्त है। सर्वाधिक प्रतिभाशाली व्यक्तियों को इस सेवा में चुना गया है, आज यदि किसी विभाग में जहां 4,000 रुपये वेतन पाने वाला सचिव विभागाध्यक्ष है, भ्रष्टाचार हो तो उसे स्वयं पर शर्म आनी चाहिए। क्या इसके लिये मैं कानून पास कराने जाऊं कि भ्रष्टाचार का अन्त होना चाहिए? कौन भ्रष्ट है? यदि घर में कोई बात गलत होती है तो उसका जिम्मेदार परिवार के प्रबंधक को ही ठहराया जाना चाहिए। इस प्रकार हमें उनको कुछ और समय तक यह पुराना जत्था जब तक कार्यरत है एक हजार रुपये अधिक देने में कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु इसके बदले में हम यह आशा करते हैं कि वे भ्रष्टाचार को जड़ से उखाड़ फेंकेंगे। अन्यथा वे यह वेतन पाने के अधिकारी नहीं हैं।

यदि हमने संविधान में ऐसा उपबंध रखा है कि हमें संविधान में संशोधन करने के लिये अनिवार्यता और अधिक बहुमत की आवश्यकता होगी तो संसद में हमें अन्य प्रयोजनों के लिए सामान्य बहुमत की आवश्यकता होगी, नियमों व विनियमों के अधीन संविधान में संशोधन करने के लिये हमें सामान्य से अधिक बहुमत की आवश्यकता होगी। जो कुछ हमने किया है उसके बावजूद, जो आश्वासन दिये हैं उनके बावजूद और उन्हें बड़ी ऊंची दर से वेतन दिये जाने के बावजूद, जिसे देने की स्थिति में हम नहीं हैं, यदि किसी विभाग में भ्रष्टाचार होता है तो हम जानते हैं कि उनसे कैसे निपटना है। संविधान चाहे पत्थर पर, कठोर पत्थर पर अमिट रूप से लिखा जाये, हम उसको भी बदल सकते हैं।

इन शब्दों के साथ, मैं सदस्यों से और सभा से भी अपील करता हूं और अनुरोध करता हूं कि सभी संशोधन वापस ले लिए जाएं और इस अनुच्छेद को, यद्यपि बिना हिचकिचाहट के नहीं, पास कर दिया जाये।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** अध्यक्ष महोदय, मैं इस अनुच्छेद का समर्थन करता हूं। मैं अपने माननीय मित्र श्री अनन्तशयनम आयंगर के भाषण को समझ नहीं पाया

हूं। आरम्भ में उन्होंने इस अनुच्छेद का विरोध किया था परन्तु किसी प्रकार बीच में अपनी दिशा बदल ली और उसका समर्थन करना आरम्भ कर दिया। यदि मैं किसी अनुच्छेद के विरुद्ध हूं तो मैं उसका विरोध करूंगा, यदि मैं उसके पक्ष में हूं तो उसका समर्थन करूंगा। मैं दो नावों में सवार नहीं हो सकता।

महोदय, इस अनुच्छेद का समर्थन करने का एक महत्वपूर्ण कारण मेरे मन में है। इस सभा के कुछ सदस्यों द्वारा संविधान में इस अनुच्छेद को सम्मिलित करने पर आपत्ति किये जाने से मेरे मन में संदेह पैदा होता है। उनके मन में क्या है? वे इस अनुच्छेद का विरोध क्यों कर रहे हैं? क्या वे अपने दिये गये वचन को पूरा करना चाहते हैं या नहीं? जो राष्ट्र महत्वपूर्ण सिद्धान्तों की बलि चढ़ा देता है, जो अपने दिये हुए वचन को पूरा नहीं करता, उसका राजनीति में कोई भविष्य नहीं रह जाता। हमने कतिपय प्राधिकारियों को वचन दिया है जो सत्ता हस्तांतरण से पूर्व विद्यमान थे। मैं यह पूरी तरह जानता हूं कि यदि हम अपने वचन पर कायम नहीं रहते तो हमारा कुछ बिगड़ेगा नहीं। परन्तु इसका प्रभाव बहुत बुरा पड़ेगा। इसलिए मैं इस अनुच्छेद के पक्ष में हूं। हमने जो वचन दिया है, हमें उस पर कायम रहना चाहिए।

मेरा इस अनुच्छेद के पक्ष में होने का एक अन्य कारण भी है। यदि इस बात की गारंटी होती कि जिन्होंने ब्रिटिश सरकार को वचन दिया है वे तब तक सत्ता में रहेंगे जब तक कि इन सेवाओं के अधिकारी भारत सरकार की सेवा में बने रहते हैं, तो मैं इस अनुच्छेद के पक्ष में न होता। परंतु हमने एक लोकतंत्रात्मक संविधान बनाया है। हम नहीं जानते कि कल हम सत्ता में रहेंगे या नहीं एक अन्य कारण से भी मैं इस अनुच्छेद को संविधान में सम्मिलित किए जाने के पक्ष में हूं। वयस्क मताधिकार में मेरा कोई विश्वास नहीं है। मैं नहीं कह सकता कि भविष्य में भारत की भावी संसद में किस प्रकार के लोग आयेंगे। अतिवाद के जोश में अथवा किसी आमूल सुधारवादी विचारधारा की बिना पर वे इस उपबंध को हटा सकते हैं जो हमने संविधान के अनुच्छेदों में सिविल सेवा के पक्ष में रखा है। इसलिए मैं चाहता हूं कि इसको संविधान का अंग बना दिया जाये ताकि संविधान में संशोधन करना इतना सरल न होने के कारण उसे हटाना उनके लिए मुश्किल हो जाएगा जो हम आज अनुबंधित कर रहे हैं।

श्री त्यागी ने एक बात उठाई थी कि इस संविधान सभा ने कुछ वचन दिये हैं और हमें भारत की भावी संसद के स्वविवेक पर कोई रोक नहीं लगानी चाहिए। मैं कहता हूं कि हमने कोई वचन नहीं दिये। हमारे नेताओं ने कुछ वचन दे रखे हैं। हम उन पर दृढ़ हैं और संसद के स्वविवेक पर कोई रोक लगाने का कोई प्रश्न ही नहीं है क्योंकि उससे तो भावी संसद प्रभुसत्ता सम्पन्न निकाय नहीं रहेगी। आज हम जो कुछ कर रहे हैं। वह संसद तथा संविधान में उल्लिखित अन्य विभिन्न संस्थाओं की शक्ति का विस्तार करने या उसे सीमित करने के लिये कर रहे हैं। हम प्रभुसत्तासम्पन्न हैं, भावी संसद नहीं। हम कार्यपालिका, न्यायपालिका अथवा संसद के स्वविवेक पर रोक लगा सकते हैं। हम इसी प्रयोजन के लिये संविधान का निर्माण कर रहे हैं।

ये विचार मेरे मन में थे और इसलिये मेरी राय यह है कि इस सभा को सर्वसम्मति से इस अनुच्छेद का समर्थन करना चाहिए जिससे विश्व पर यही प्रभाव पड़े कि हम अपने वचन के पक्के हैं। यह तो केवल पहला कदम है—हम नहीं जानते कि हमें अपने अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के दौरान और कितने वचन देने पड़ेंगे। एक गलत कदम हमें विनाश की ओर ले जा सकता है। यह कोई अधिक महत्वपूर्ण कदम नहीं है। हमें यह जानना चाहिए कि विश्व के अन्य राष्ट्रों के साथ अपने

[श्री बृजेश्वर प्रसाद]

सम्बन्धों के बारे में हमें किस प्रकार व्यवहार करना चाहिए। इसलिए मैं इस प्रश्न को गम्भीरता से लेता हूं और इसे बहुत महत्व देता हूं। मैं पूरी तरह से इस अनुच्छेद के पक्ष में हूं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैंने इस खण्ड को निकाल देने के लिये संशोधन संख्या 12 पेश किया था। मैं इस अनुच्छेद को जितना पढ़ता हूं, मुझे उतनी ही अधिक हैरानी होती है कि इसको संविधान में सम्मिलित करने के लिए क्यों रखा गया है। यह बात तो मेरी समझ में आती है कि भावी संसद सिविल सेवा के पुराने अधिकारियों को सेवा की पुरानी शर्तों पर ही जारी रखने की अनुमति दे दे, परन्तु यह बात मेरी समझ में नहीं आती कि जो गारंटियां उनको पहले प्राप्त थीं उन सभी गारंटियों की व्यवस्था संविधान में की जाये। कांग्रेस अपने आंदोलन के प्रारम्भ से ही सिविल सेवा को दृढ़ इरादे वाली सेवा मानती रही है जिसने हमें दास बनाया और इसकी सेवा शर्तों की ओर जिस प्रकार इसकी आदत बिगाड़ी गयी उसकी आलोचना करती रही है। इसे ऐसी सेवा माना जाता था जिसको सभी सुख, सुविधाएं उपलब्ध थीं। मेरे विचार में अब जब हम स्वतंत्र हो गये हैं तब हमें वह सब कुछ नहीं रखना चाहिए जिसकी हम अब तक आलोचना करते रहे हैं और हमें स्पष्ट रूप से यह कह देना चाहिए कि उन शर्तों को जारी रखने का तनिक भी कोई कारण दिखाई नहीं देता। मुझे बताया गया है कि उनको कुछ गारंटियां व आश्वासन दिये गये हैं। मुझे इन किसी की कोई जानकारी नहीं है, परन्तु यदि ऐसा किया गया तो इस सम्बन्ध में मेरा सुझाव यह है कि संसद को उन्हें पूरा करने का प्रयास करना चाहिए, परन्तु भावी संसद को किसी बात से बांधना और यह कहना कि उनको अपने कर्मचारियों की सेवा शर्तें तय करने का अधिकार नहीं होगा कुछ ऐसी बात है जो संसद की प्रभुसत्ता के लिए अपमानजनक है।

फिर, मैं सिविल सेवा के पुराने अधिकारियों के काम से भी प्रसन्न नहीं हूं। मैं जानता हूं कि उनमें बहुत से व्यक्ति ऐसे भी हैं जिन्होंने बहुत अच्छा काम किया है और जो, जैसा कि एक बार सरदार ने कहा था, सोने में तोलने लायक है, परन्तु यह बात सबके बारे में नहीं कही जा सकती और मेरी अपनी शिकायत यह है कि जिस प्रकार का व्यवहार वे अब तक भी कर रहे हैं उसी के कारण हमारे देश को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। मेरे विचार में सिविल सेवा के अधिकारियों के साथ अब बनाई जा रही सेवाओं—प्रशासनिक सेवाएं—से भिन्न तरीके का व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए, अन्यथा इससे दुर्भावना पैदा होगी। उन सबके साथ समान व्यवहार किया जाना चाहिए। वास्तव में उनकी सेवा का रिकार्ड ऐसा नहीं है जैसा कि कोई चाहेगा कि वह होना चाहिए था। श्री अनन्तशयनम आयंगर ने बताया है कि हमारे स्वतंत्रता संग्राम के दौरान इन लोगों ने राष्ट्र के साथ किस प्रकार धोखा किया था। इसलिये मेरे विचार में यह अनुच्छेद कालदोष है। इसको हमारे संविधान में सम्मिलित नहीं किया जाना चाहिए और इसको निकाल देना चाहिए।

***श्री कुलधर चालिहा** (असम-जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं समझता हूं कि जिस रूप में यह खण्ड है उसका समर्थन करना कठिन बात है, परन्तु साथ ही यह भी है कि हमारे उन लब्धप्रतिष्ठ नेताओं ने वचन दिये हैं जिन्होंने स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिये अपने जीवन की सुख-सुविधाओं का बलिदान कर दिया और उनके वचनों का आदर किया ही जाना चाहिए। इसका एक दूसरा पक्ष यह है कि हम इस प्रकार की दुविधा में फंसे हैं। हम इस खण्ड का समर्थन इसलिए करना चाहते हैं कि हमारे महान नेताओं ने अपना वचन दे रखा है, परन्तु इसके साथ

ही यह बात भी है कि हम अपने निर्वाचकों से कहते आ रहे हैं कि जब हमें स्वतंत्रता प्राप्त हो जायेगी तब हम विभिन्न सेवाओं के अधिकारियों के वेतन कम करके इतने कर दें कि वे उनका भुगतान कर सकें। जैसाकि श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने कहा है जो वचन दिये गये हैं उनका समर्थन करने के लिये हम बाध्य हैं और हम उन्हें इस प्रकार पूरा करने के लिए बाध्य हैं कि जिससे सेवाओं के अधिकारियों में विश्वास की भावना पैदा हो जाये। हम भी सेवाओं के अधिकारियों के बारे में सोचते हैं क्योंकि उन्होंने कुछ ऐसे काम किए हैं जिनके बिना सरकार चलाना सम्भव नहीं होगा। वे विश्व की सर्वोत्तम सेवाओं में से एक हैं और अन्तर्राष्ट्रीय स्थितियों में उन्होंने अपने कर्तव्य को भलीभांति निभाया है। फिर भी यह उनके अपने सोचने की बात है कि देश की ऐसी स्थिति है कि उनको कुछ बलिदान करना चाहिए और वे उन शर्तों का परित्याग कर दें जिनकी उनके लिए व्यवस्था की गई थी और जिन शर्तों पर वे काम करना चाहते थे, सर्व सुख-सुविधा सम्पन्न इस सेवा की आदत ली कमीशन ने अपनी अधिक बिगाड़ दी और तब भी हम चिल्लाते रहे। अतः हमने यदि कोई वचन दिये हैं तो हमें उनका पालन करना चाहिए जैसाकि श्री आयंगर ने कहा कि खाद्यान्न के बारे में हम कोई वचन नहीं दे सके और फिर भी हम इस मामले में वचन दे रहे हैं। क्या हम उचित कर रहे हैं? क्या हमारे लिए अर्थव्यवस्था समिति की सिफारिशें लागू करना अनिवार्य नहीं है? श्री आयंगर ने एक दिन कहा था कि समिति ने अनेक बातों की सिफारिश की है परन्तु हमने उनको क्रियान्वित नहीं किया है। क्या जनता को दी गयी गारंटियों को पूरा करना हमारे लिए अनिवार्य नहीं है?

यदि हम सभी परिस्थितियों पर दृष्टिपात करें तो हमें वेतनों में वृद्धि करना बंद कर देना चाहिए और इस मामले में हमें पाकिस्तान के आदर्श का अनुसरण करना चाहिए। उन्होंने वेतन में केवल 30 प्रतिशत की वृद्धि की है जिसके वे लोग अधिकारी थे। जब कोई व्यक्ति संयुक्त सचिव बनता है तो उसे 3000 रुपये मिलते हैं। इतनी राशि क्यों दी जानी चाहिए? यदि उसके वेतन का 30 प्रतिशत उसे और दे दिया जाये तो वह पर्याप्त होना चाहिए। गारंटी या प्रतिज्ञा के सही-सही शब्दों की मुझे जानकारी नहीं है, परन्तु मैं श्री शिब्बन लाल सक्सेना के साथ सहमत हूं कि संविधान में कोई ऐसा उपबंध नहीं करना चाहिये जो भीवी पीढ़ी के हाथ बांध दे। अनेक मामलों में मैं श्री अनन्तशयनम आयंगर द्वारा कही गई बातों से सहमत हूं और मैं आशा करता हूं कि प्रारूप समिति इस पर विचार करेगी और सुनिश्चित करेगी कि इस अनुच्छेद में इस प्रकार संशोधन किया जाये कि यह भावी पीढ़ी के लिये कोई बन्धनकारी न हो।

***बाबू राम नारायण सिंह** (बिहार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, कभी-कभी सभा के समक्ष विचार के लिये ऐसे मामले आ जाते हैं जिनका समर्थन करना बहुत कठिन हो जाता है। फिर भी मेरा इरादा विचाराधीन उपबंध का विरोध करने का नहीं है, क्योंकि राष्ट्र की ओर से सिविल सेवा के अधिकारियों को गारंटी दी गई है कि उनके हितों की सुरक्षा की जायेगी और उनकी परिलब्धियों तथा विशेषाधिकारों में जिनके वे अब तक अधिकारी थे, कोई परिवर्तन नहीं किया जायेगा। वास्तव में उनको हर प्रकार का आश्वासन दिया जा रहा है। परन्तु मेरी समझ में यह नहीं आ रहा है कि इस समय इस प्रकार की गारंटियां दिये जाने की क्या आवश्यकता है। इन आश्वासनों की उस समय आवश्यकता हो सकती थी जब अंग्रेज हमारे देश से गये थे क्योंकि तब सिविल सेवा के अधिकारियों को अपने भविष्य के बारे में शंका थी कि कहीं उनको सेवा से हटा न दिया जाये। परन्तु अब तो इस प्रकार की कोई शंका नहीं है। स्थिति बिल्कुल बदल गयी है। अब वे महसूस करने लगे हैं कि देश का प्रशासन उनके बिना नहीं चल सकता है। इसलिये इस समय इस प्रकार की गारंटी की कोई आवश्यकता नहीं है।

[बाबू राम नारायण सिंह]

फिर भी यदि आप उनको गारंटियां देना चाहते हैं तो मुझे ऐसा किये जाने में कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु हमें यह पता होना चाहिए तथा मैं यह और कह दूं कि इस सभा के प्रत्येक सदस्य को अपने हृदय में यह बात नोट कर लेनी चाहिए कि कुछ समय पूर्व इन्हीं सेवाओं ने अंग्रेजी शासन के बने रहने में उनकी सहायता की थी, उनके द्वारा हमारे साथ दुर्व्यवहार किया जाता था, हमारा दमन किया जाता था और हमें जेलों में भेजा जाता था। मैं यह कहना चाहता हूं कि हमारे देश में सिविल सेवा के अधिकारी यहां ब्रिटिश शासन के समर्थक थे। परन्तु अब उनको समझ लेना चाहिए कि अब हमें किसी का शासन नहीं चाहिए। अब हमने स्वराज्य पा लिया है और स्थापित कर दिया है। स्वराज्य में, सिविल सेवा के अधिकारियों को जनता को आश्वासन देना चाहिए कि वे ईमानदारी के साथ देश की सेवा करेंगे। अपनी ओर से हम उनको यह आश्वासन देते हैं कि उनका भविष्य सुरक्षित रहेगा, परन्तु उनकी ओर से कोई आश्वासन नहीं आ रहा कि वे ईमानदारी से देश की सेवा करेंगे और प्रशासन में भ्रष्टाचार नहीं होगा। अब सभी इस बात को जानते हैं कि उनके व्यवहार में लेशमात्र भी परिवर्तन नहीं आया है और अब भी वे वैसे ही हैं जैसे पहले थे।

पहले—मैं दो वर्ष पूर्व की बात कर रहा हूं—वे सोचते थे कि वे देश के मालिक हैं, वे मालिक ही रहेंगे और जनता पर शासन करते रहेंगे। यही मानसिकता उनमें आज भी काम कर रही है। अब चूंकि अंग्रेज चले गये हैं और जनता की लोकप्रिय सरकार बन गयी है तो सिविल सेवा के अधिकारियों को भी अपना व्यवहार और दृष्टिकोण बदलना चाहिए, जिससे जनता यह महसूस करे कि वे जनता का दमन करने और उस पर शासन करने के लिए नहीं हैं, बल्कि उनकी सेवा व रक्षा करने के लिए हैं। परन्तु मुझे खेद है कि उनके द्वारा इस आशय का कोई आश्वासन नहीं दिया जा रहा है। मैं यह निवेदन कर दूं कि श्री अनन्तशयनम आयंगर द्वारा व्यक्त किये गये विचार बिल्कुल सही हैं। हमें इस बात पर भी विचार करना होगा कि ये लोग कहां तक ठीक से जनता की सेवा और रक्षा कर सकते हैं। सिविल सेवा के अधिकारियों को समझ लेना चाहिए कि उन्होंने अपने आपको अभी तक नहीं बदला है और जब तक वह अपने आपको नहीं बदलते तब तक संविधान में उनकी रक्षा के लिए दी जाने वाली गारंटियों का कोई अर्थ नहीं होगा। उनको राष्ट्र की ईमानदारी से सेवा करनी होगी और ऐसा करने के लिए उनको जनता की इच्छाओं का आदर करना होगा। उन्हें यह बात नोट करनी होगी कि जब तक वे अपनी अत्यन्त पुरानी नीति व व्यवहार नहीं बदलेंगे तब तक संविधान से उनके लिये दी गयी गारंटियों से उन्हें कोई लाभ नहीं पहुंचेगा।

मुझे अधिक और कुछ नहीं कहना है सिवाय इसके कि मैं आशा करता हूं कि वे अपने कार्यों व व्यवहार से देश की सेवा करेंगे और अपने आपको सदा देश का सेवक समझेंगे, मालिक नहीं। अब उन्हें मालिकपन का विचार छोड़ देना चाहिए।

***माननीय सरदार बल्लभभाई जे. पटेल** (बम्बई-जनरल): महोदय, मुझे इस बात से दुख हुआ है कि श्री अनन्तशयनम आयंगर जैसे वरिष्ठ सदस्य, जो कि इस सभा के एक जिम्मेदार सदस्य हैं और जो कि सभा के उपाध्यक्ष भी हैं, यह सोचते हैं और अपनी यह राय अभिव्यक्त करते हैं कि सिविल सेवा के अधिकारी गत दो या तीन वर्षों से बड़ी कठिन स्थिति में प्रशासन का कार्य चला रहे हैं और साथ ही यह भावना भी संजोये हुए हैं कि वे अधिकारी हमारे देश के शत्रु

हैं। यदि ऐसी बात है तो यह उनका, अथवा वैसे ही विचार रखने वाले लोगों का काम था कि वे पहले एक संकल्प प्रस्तुत करते कि उन अधिकारियों की सेवाएं समाप्त कर दी जायें और फिर शून्य में प्रशासन को चलाते—क्योंकि उनके विचार में कांग्रेसजन अथवा कांग्रेस कार्यकर्ताओं को छोड़कर उन अधिकारियों का स्थान लेने के लिये कोई अन्य व्यक्ति उपलब्ध नहीं थे। मुझे बहुत दुख हुआ है कि जिन लोगों से हमने काम लेना है, हम उन्हीं के साथ निरन्तर झगड़ रहे हैं। यदि यही बात है तो हम देश की सेवा नहीं कर रहे हैं बल्कि भारी अनिष्ट कर रहे हैं।

उन्होंने कहा कि यह गारंटी नहीं दी जानी चाहिए थी। वह अब तक क्या करते रहे हैं? जिन लोगों के ऐसे विचार हैं मैं उनसे कहना चाहता हूं कि यह गारंटी किसी गुप्त तरीके से तो नहीं दी गई थी। ब्रिटिश सरकार के साथ जो भी व्यवस्था की गई थी वह गुप्त तरीकों से तो नहीं की गई थी, किसी एक व्यक्ति द्वारा तो नहीं की गई थी, वरन् हमारे प्रतिनिधियों द्वारा, राष्ट्र के मान्यता प्राप्त प्रतिनिधियों द्वारा की गई थी। जब श्री हेंडरसन यहां पर सेवाओं के अधिकारियों सम्बन्धी मामले का समाधान करने के लिये आये थे तो उन्होंने मेरे साथ विस्तृत चर्चा की थीं। उन्होंने कहा था कि सत्ता हस्तांतरण से पूर्व ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिये जिससे पार्लियामेंट इस बारे में पूरी तरह संतुष्ट हो जाये—कि सत्ता का हस्तांतरण तभी होगा जब सेक्रेटरी ऑफ स्टेट्स के साथ समझौता है, सदस्यों को गारंटियां दे दी जायेंगी। सेक्रेटरी ऑफ स्टेट की सेवाओं के 50 प्रतिशत से अधिक सदस्य यूरोपीय अथवा ब्रिटेन के थे और शेष भारतीय थे। तब उन्होंने सुझाव दिया था कि भारत और इंग्लैंड के बीच इस संबंध में एक समझौता होना चाहिए। यह भी सुझाव दिया गया था कि यदि वे सर्विसेज को छोड़ते हैं, क्योंकि वे भारतीय प्रशासन में सेवा नहीं करना चाहेंगे, तो उनको उचित मुआवजा दिया जाना चाहिये और यह कि उन्हें, आनुपातिक पेंशन भी दी जानी चाहिये। सत्ता हस्तांतरण के प्रश्न पर विचार करने से पूर्व उनकी पद-स्थिति, उनका समयबद्ध वेतनमान आदि सभी बातों का समाधान किया जाना था। मैंने काफी लम्बी बातचीत की थी। उस समय मुसलमानों और गैर-मुसलमानों की संयुक्त सरकार थी। उस समय एक अखिल भारत सरकार थी और इस बातचीत से कुछ निष्कर्ष निकले थे जो मंत्रिमंडल के समक्ष रखे गये थे—उस समय संयुक्त मंत्रिमंडल था—और उन्होंने उनको स्वीकार कर लिया था। फिर वे निष्कर्ष पार्लियामेंट को भेजे गये और वे वहां पर स्वीकार कर लिये गये। अनेक यूरोपीय, जो यहां पर सेवाओं में थे, अब छोड़कर चले गये हैं, परन्तु जब बातचीत चल रही थी तो मैंने उनसे कहा था वे भारतीय व्यक्तियों का मामला हम पर छोड़ दें और हम जैसा न्यायोचित समझें उनके साथ व्यवहार करेंगे, हम उन पर विश्वास करेंगे और वे हम पर विश्वास करेंगे और अन्त में वे कुछ शर्तों पर सहमत हो गये।

अब मैं यह बताना चाहता हूं कि जब हम यह व्यवस्था कर रहे थे तब किसी व्यक्ति ने कोई आपत्ति नहीं की थी, परन्तु यदि उनको हम पर संदेह था तो उस समय उनके लिये इस बात की काफी गुंजाइश थी कि वे सामने आते और बाहर की एजेंसियों से कुछ अच्छी शर्तों कर काम कराते। अब भी यदि आप उनको नहीं रखना चाहते तो आप विकल्प ढूंढ लीजिए, उनमें से बहुत से लोग चले जायेंगे, उनमें से योग्यतम व्यक्ति तो चले ही जायेंगे। मैं आपको आश्वस्त करना चाहता हूं कि मैंने उनके साथ इस कठिन समय में काम किया है—मैं पूरी जिम्मेदारी के साथ बोल रहा हूं—मैं कहना चाहता हूं कि देशभक्ति, निष्ठा, ईमानदारी और योग्यता के मामले में आपको उनका विकल्प नहीं मिल सकता। वे उतने ही अच्छे हैं जितने कि हम हैं और इस सभा में, सार्वजनिक रूप से, अपमानजनक

[माननीय सरदार बल्लभभाई जे. पटेल]

शब्दों में उनकी निन्दा करना और इस प्रकार उनकी आलोचना करना अपना और देश का अनिष्ट करना है। यह मेरा सोचा समझा हुआ मत है।

अब मैं कुछ अन्य तथ्य आपके सामने रखना चाहता हूं कि जिनसे आप संतुष्ट हो जायेंगे कि गारंटियां क्यों दी गई थीं। आपने देखा था, पंजाब में क्या हो रहा था। पांच जिलों में जहां तबाही मची हुई थी, पांच अंग्रेज अधिकारी सत्ता में थे और कुछ नहीं किया जा सका। मैंने गुड़गांव के जिला मजिस्ट्रेट को स्थानान्तरित करवाने का प्रयत्न किया। परन्तु मुझे सफलता नहीं मिली और वहां एक ब्रिटिश अधिकारी ने प्रमुख कांग्रेसजनों को गिरफ्तार कर लिया, जबकि उनकी कोई गलती नहीं थी और उनको जेल में, बन्धकों के रूप में, बन्द कर दिया। वह इतना अक्खड़ था कि बार एसोसिएशन के प्रेसीडेंट द्वारा उसके समक्ष प्रस्तुत आवेदन पर उसने लिख दिया कि वे लोग निर्दोष थे, कि उनको गिरफ्तार नहीं किया जाना चाहिए था और उनको तत्काल रिहा कर दिया जाये, कि वे लोग बन्धक के रूप में रखे गये थे। उसके काम करने का यह तरीका था। मुझे यह जानकारी गहरा धक्का लगा और मैं गुड़गांव गया। रास्ते में मैंने उसे आते देखा और मैंने उससे पूछा "क्या आपने बन्धक के रूप में कुछ लोगों को गिरफ्तार किया है?" उसने उत्तर दिया "नहीं तो, आपको किसने बताया है?" सौभाग्य से मेरे पास वह दस्तावेज था जिस पर उसने पृष्ठांकन किया था और मैंने वह उसे दिखा दिया। उसने कहा "यह आपको कैसे मिला?" मैंने कहा, "प्रश्न यह नहीं है। यह आपका पृष्ठांकन है या नहीं?" उसके बाद मैंने बहुत कोशिश की, मैंने पंजाब के तत्कालीन गवर्नर को लिखा, मैंने वाइसराय से भी इस बारे में चर्चा की परन्तु मुझे उसको हटाने में बहुत कठिनाई हुई। और आप जानते हैं कि गुड़गांव तथा अन्य जिलों में किस प्रकार तबाही मची हुई थी। यह हालत पंजाब में ही नहीं थी, अन्य स्थानों पर भी ऐसी अनेक घटनाएं हो रही थीं। उस समय आशंका की स्थिति बनी हुई थी और हम भारत को खो भी सकते थे। तब हमने इस बात पर जोर डाला कि हम ऐसी स्थिति में पहुंच गये हैं कि सत्ता का हस्तांतरण तत्काल हो जाना चाहिए, चाहे कुछ भी हो, और फिर हमने त्याग-पत्र देने का निर्णय किया। उस समय लॉर्ड माउंटबेटन भारत में आये।

मैं आपको यह अंदरूनी इतिहास बताता हूं जिसे कोई नहीं जानता। जब हम एक ऐसी अवस्था में पहुंच गये कि शासन हमारा सब कुछ चला जाता, तब मैंने अन्तिम चारे के रूप में देश के विभाजन को स्वीकार किया था। सरकार में हमारे पास पांच या छः सदस्य थे—मुस्लिम लीग के सदस्य। उन्होंने अपने आपको ऐसे सदस्यों के रूप में स्थापित कर लिया था जो देश का विभाजन कराने के लिये ही आये थे। उस अवस्था में हमने विभाजन के विकल्प को स्वीकार किया था। हमने निर्णय किया कि इस शर्त पर विभाजन माना जा सकता है कि पंजाब का विभाजन किया जाये—वे सारा पंजाब चाहते थे—कि बंगाल का विभाजन किया जाए—वे कलकत्ता और सारा बंगाल चाहते थे। श्री जिन्ना कटा-छंटा पाकिस्तान नहीं चाहते थे, परन्तु उन्हें भी यह मानना पड़ा। हमने कहा कि इन दो प्रान्तों का विभाजन किया जाना चाहिए। मैंने एक और शर्त रखी कि यदि इस बात की गारंटी दी जाये कि ब्रिटिश सरकार देशी रियासतों के मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगी तो दो महीने की अवधि में सत्ता का हस्तांतरण कर दिया जाना चाहिए और उस अवधि के भीतर पार्लियामेंट को एक अधिनियम पास कर देना चाहिए। हमने कहा "हम इस मामले के साथ स्वयं निपटेंगे, इसको हम पर छोड़ दो, आप किसी का पक्ष मत लो। सर्वोपरि सत्ता का अब अन्त होने दीजिए, आप प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप

से किसी भी प्रकार से इस मामले को पुनर्जीवित न करें। आप हस्तक्षेप मत कीजिए। हम अपनी समस्या का समाधान कर लेंगे। राजा-महाराजा हमारे हैं और हम उनके साथ निपट लेंगे।" उन शर्तों पर हमने विभाजन की बात स्वीकार की थी और उन्हीं शर्तों पर दो महीने के भीतर पार्लियामेंट में विधेयक पास किया गया था और सभी तीनों पक्षों ने उस पर सहमति व्यक्त की थी। ब्रिटिश पालिर्यामेंट के इतिहास में कोई दृष्टांत दिखा दीजिए जिसमें दो महीने के भीतर कोई विधेयक पास किया गया हो। परन्तु इस मामले में यह किया गया। उसी के परिणामस्वरूप इस पार्लियामेंट का जन्म हुआ।

अब आप कहते हो कि नेताओं ने ये गारंटियां क्यों दीं? इसलिए दीं कि आपको इसी बात को लेकर अपने नेताओं की आलोचना करने का अवसर मिल सके और क्या? आप एक महान देश की संसद के जिम्मेदार सदस्य हैं। इस संसद के नेता को अमरीका ने आमंत्रित किया है जो कि बहुत बड़ा सम्मान है जो उनको दिया जा सकता था। उनका बहुत आदर व सम्मान किया गया है। वे उनको हर प्रकार के सम्मानित कर रहे हैं। आप यहां पर कहते हो "नेताओं ने ये आश्वासन क्यों दिये?" बीते समय को याद कीजिए। उसको आप भूल क्यों जाते हैं? क्या आपने हाल ही का अपना इतिहास पढ़ा है?

ऐसी बातें करने का क्या लाभ है कि जब हम जेलों में थे तब सेवाओं के ये लोग नौकरी कर रहे थे? मैं स्वयं गिरफ्तार किया गया था, मैं अनेक बार गिरफ्तार किया गया हूं। परन्तु उससे सेवाओं में काम करने वाले व्यक्तियों के प्रति मेरी भावनाओं में कभी कोई अन्तर नहीं पड़ा है। मैं कलंकियों का समर्थन नहीं कर रहा, वे तो हो सकते हैं। परन्तु क्या सेवाओं के अधिकारियों में बहुत से लोग ईमानदार नहीं हैं? परन्तु आप उनके लिए कैसी भाषा का प्रयोग कर रहे हैं? मैं इस सभा के रिकार्ड के लिए यह कहना चाहता हूं कि यदि गत दो या तीन वर्षों में सिविल सेवाओं के अधिकांश अधिकारियों ने देशभक्ति की भावना से और निष्ठा से काम नहीं किया होता तो यह संघ समाप्त हो गया होता। डॉ. जॉन मथाई से पूछिए। वह उनके साथ गत पखवाड़े से आर्थिक मामलों के बारे में कार्य कर रहे थे। आप उनकी राय लीजिए। आपको पता चल जाएगा कि सेवाओं के प्रति उनकी भावना क्या है। आप सभी प्रान्तों के प्रीमियरों से पूछिए। क्या कोई भी प्रीमियर सिविल सेवा अधिकारियों के बिना काम करने को तैयार है? वह तत्काल त्याग-पत्र दे देगा। उसका गुजारा नहीं है। हमारे पास सिविल सेवा के बचे हुए कुछ ही अधिकारी थे। हमने उन थोड़े से व्यक्तियों के साथ बहुत कठिन कार्य चलाया है। यदि कोई जिम्मेदार व्यक्ति इस सेवा के बारे में इस लहजे में बोले तो उसको इस बात का निर्णय करना होगा कि क्या उसके पास कोई विकल्प है और फिर वह जिम्मेदारी ले ले। यह कांग्रेस का कोई प्लेटफार्म नहीं है। यह कहा जाता है कि कराची में पारित एक संकल्प में हमने मंत्रियों को 500 रुपये देने का वचन दिया था। अब कराची और दिल्ली में बहुत दूरी हो गई है। अब स्थिति बदल गई है। आप 45 रुपये प्रतिदिन चाहते हैं और वह भी कर-मुक्त। आज 500 रुपये की बात करने का क्या लाभ है? यह बहुत गलत बात है।

परन्तु मैं इस बात को स्वीकार करता हूं कि यदि भारत सरकार को सेवा के बिना गांधी दर्शन के आधार पर चलाना है तो मैं समूची व्यवस्था को बदलने के लिए तैयार हूं। आज आप सेना पर 160 से 170 करोड़ रुपये प्रति वर्ष खर्च करते हैं। क्या आप इस व्यवस्था को बदलने के लिए तैयार हैं? यदि आपके पास प्रबल सैन्य शक्ति नहीं होगी तो कल एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक समूचे भारत पर कोई अन्य देश कब्जा कर लेगा।

[माननीय सरदार बल्लभभाई जे. पटेल]

पुलिस को, जो एक खण्डित सेवा रह गई थी, समुचित स्तर पर लाया गया है और वह बहुत दक्षतापूर्वक कार्य कर रही है। प्रत्येक प्रान्त के पुलिस विभागाध्यक्ष इस गारंटी के अन्तर्गत आते हैं। क्या आप इस व्यवस्था को बदलना चाहते हैं? क्या आप अपने कांग्रेस स्वयंसेवकों को कैप्टन नियुक्त करेंगे? आपका क्या करने का विचार है?

जब इस प्रकार की संसद में सदस्य, वरिष्ठ सदस्य, इस लहजे से बोलते हैं तो मुझे दुख होता है। मैं आपका ध्यान भारत स्वतंत्रता अधिनियम की ओर दिलाना चाहूंगा जिसके कारण यह संसद अस्तित्व में आई और आपको, पता चला कि उसमें गारंटियां शामिल की गई हैं। जब पार्लियामेंट में भारत स्वतंत्रता अधिनियम पास किया जाना था तो उसका प्रारूप यहां भेजा गया था। राष्ट्र के नेताओं को आमंत्रित किया गया था, वहां मंत्रिमंडल था, कांग्रेस के अध्यक्ष थे, आपके अध्यक्ष थे और आपके विद्यमान नेता वहां पर उपस्थित थे। महात्मा गांधी भी वहां मौजूद थे। प्रत्येक धारा पर बारीकी से विचार किया गया और प्रारूप का अनुमोदन कर दिया गया। तत्पश्चात् वह पार्लियामेंट में पास किया गया। उससे पहले ये गारंटियां सभी प्रान्तों को भेजी गई थीं। सभी प्रान्त उन पर सहमत हो गये थे। इस बात पर भी सहमति हो गई कि उनको संविधान सभा के नये संविधान में भी सम्मिलित किया जाये। गारंटी वाली बात का एक पक्ष यह है। क्या आपने इस इतिहास को पढ़ा है? अथवा क्या आप, जबसे आपने इतिहास बनाना आरम्भ किया है, हाल ही के इतिहास की परवाह नहीं करते। यदि आप करते हैं तो मैं आपको बता दूं कि आपका भविष्य अंधकारमय है। आपने जो वचन दिया है, उस पर कायम रहना सीखिए और एक अनुभवी व्यक्ति होने के नाते मैं आपको बताता हूं कि उन साधनों से झगड़ा मत करो जिनके साथ मिलकर आप काम करना चाहते हैं। जिनके साथ मिलकर आप काम करना चाहते हो उनके साथ झगड़ा करना खराब बात है। उनसे काम लीजिए। प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी प्रकार का प्रोत्साहन चाहता है। यदि सबके सामने किसी व्यक्ति की आलोचना की जाए या उसकी हंसी उड़ाई जाए तो वह काम नहीं करना चाहेगा। इस प्रकार आपको कोई भी काम करके नहीं देगा। इसलिये आप एक ही बार हमेशा के लिये निर्णय कर लीजिये कि आपको इस सेवा की आवश्यकता है या नहीं? यदि आपने विचार कर लिया है और मेरे द्वारा दिये गये वचन के बावजूद इस सेवा को समाप्त कर देने का निर्णय किया है तो मैं यह सोच कर इन सेवाओं को अपने साथ ले जाऊंगा और चला जाऊंगा कि राष्ट्र का मत बदल गया है।

इस सेवा के अधिकारी अपनी जीविका अर्जित कर लेंगे। वे योग्य व्यक्ति हैं। उनका प्रशिक्षण भिन्न वातावरण में हुआ था। मैं इस सेवा के पच्चीस वर्ष की सेवा वाले एक वरिष्ठ सदस्य को जानता हूं जो उच्चतर शिक्षा व सिविल सेवा में प्रशिक्षण के लिए इंग्लैंड गया था और उसने लगभग 50 हजार रुपये खर्च किये थे। उसने ऋण लिया था, उसके पास धन नहीं था। परन्तु भारत के युवकों का सिविल सेवा के प्रति आकर्षण है। वह वहां पर गया, विशिष्ट अंकों से उत्तीर्ण हुआ और स्वदेश लौटा। उसने बड़ी योग्यता से व बहुत निष्ठा के साथ तत्कालीन सरकार की और बाद में वर्तमान सरकार की सेवा की। उसका काम सरकार की सेवा करना है—उसकी वह सेवा कर रहा है। उसमें देशभक्ति की भावना विद्यमान है। प्राय: उसको कठिन स्थिति का सामना करना पड़ता था जब उसे तत्कालीन सरकार के आदेशों का पालन करते हुए कांग्रेसजनों के विरुद्ध कार्यवाही करनी पड़ती थी, उनको जेल में डालना पड़ता था अथवा अन्य ऐसा कुछ करना पड़ता था।

परन्तु वह एक निश्चित सीमा के आगे नहीं जा सकता था। अब आज 25 वर्ष की सेवा के अन्त में उसके पास केवल दस हजार रुपये शेष हैं और जब वह मरेगा तो उसकी पत्नी व बच्चों को भविष्य निधि की थोड़ी सी राशि मिलेगी।

ये परिस्थितियां हैं जिसमें सिविल सेवा के बहुत से लोगों ने प्रशिक्षण प्राप्त किया, यहां आये और सेवा की। अब हम कह सकते हैं "बहुत अच्छा, उन्होंने यह यह सब कुछ खुली आंखों से किया था, अब उनको कष्ट भोगने दो।" ऐसी अवस्था में आपको उनका विकल्प तैयार करने के लिये इरादा करना होगा। हमारे पास एक विकल्प पहले ही है। हमने भारत में ही एक प्रशिक्षण स्कूल स्थापित कर दिया है, हमने एक संवर्ग बनाया है, प्रान्तों ने तत्संबंधी प्रस्तावों का अनुमोदन कर दिया है। आप यह सब कुछ जानते हैं।

यदि आप एक दक्ष अखिल भारतीय सेवा चाहते हैं तो मैं आपको सलाह दूंगा कि सिविल सेवा के अधिकारियों को स्वतंत्रता से अपनी बात कहने दीजिए। यदि आप मुख्य मंत्री (प्रीमियर) हैं तो आपका यह कर्तव्य हो जाता है कि आप अपने सेक्रेटरी अथवा चीफ सेक्रेटरी या अपने अधीन कार्यरत अन्य सेवाओं के अधिकारियों को निर्भीक होकर व निष्पक्ष रूप से अपनी राय व्यक्त करने की अनुमति दें। परन्तु आजकल मैं एक प्रवृत्ति देखता हूं कि अनेक प्रांतों में सेवाओं को भड़काया जाता है और उनसे कहा जाता है "नहीं, आप सेवा करने वाले हो, आपको हमारे आदेशों का पालन करना ही चाहिये।" यदि आपके पास एक अच्छी अखिल भारतीय सेवा नहीं है, जिसमें सेवा करने वाले लोग अपना मत व्यक्त करने में स्वतंत्र हों और उनके मन में सुरक्षा की भावना हो कि आपने जो वचन दिया है, आप उस पर कायम रहेंगे और यह कि अन्ततोगत्वा हमारी संसद है, जिस पर हमें गर्व होना चाहिए, जहां उनके अधिकार व विशेषाधिकार सुरक्षित रहेंगे तो यह संघ समाप्त हो जायेगा—संयुक्त भारत का अस्तित्व नहीं रहेगा। यदि आपको यह मार्ग नहीं अपनाना है तो अब वर्तमान संविधान के उपबंधों का पालन मत कीजिए। इसके स्थान पर कुछ और अपना लीजिए। कांग्रेस संविधान लाइए अथवा कोई अन्य संविधान लाइए या आर.एस.एस. संविधान लाइए। जो भी आपको पसन्द हो लाइये—परन्तु इस संविधान का परित्याग कर दीजिए। इस संविधान का पालन तो एक ऐसी सेवा के व्यूह द्वारा किया जाएगा जो देश को अखण्ड बनाये रखेगी। इस संविधान में अनेक बाधाएं हो सकती हैं जिससे हमारा मार्ग अवरुद्ध हो सकता है, परन्तु उसके बावजूद हम सबने मिलकर विचार-विमर्श करके यह निर्णय किया है कि हम संविधान का यह प्रतिरूप रखेंगे जिसमें इस प्रकार की सेवा की व्यवस्था होगी जो देश को नियंत्रण में रखेगी।

जैसाकि मैंने आपको बताया, यह करार और ये गारंटियां प्रान्तों को तथा सेवा के प्रत्येक सदस्य को भेजी गयीं थी। उस करार पर सहमति व्यक्त की गयी और प्रान्तों ने उस पर हस्ताक्षर किये। उन्होंने—उन दोनों ने इसे स्वीकार किया है। क्या आप अब इन बातों से पीछे हट सकते हैं? क्या नई संसद में नैतिकता का कोई स्थान नहीं है? क्या नयी स्वतंत्रता का प्रारम्भ हम इसी प्रकार करेंगे? मैंने ऐसे लोगों को देखा है जो आज भी इस सेवा के बारे में उसी रूप में अपनी राय व्यक्त करते हैं जिसमें कि वे पुराने जमाने में व्यक्त करते थे जब इस सेवा के 50 या 60 प्रतिशत अधिकारी अंग्रेज होते थे जो इस सेवा पर छाये हुए थे और इस सेवा के भारतीय अधिकारियों को अपनी राय व्यक्त करने की स्वतंत्रता नहीं थी और वे स्वतंत्र नहीं थे। आज मेरा सचिव एक ऐसा टिप्पण लिख सकता है जो मेरे विचारों से मेल न खाता हो। मैंने अपने सभी सचिवों को यह स्वतंत्रता दे

[माननीय सरदार बल्लभभाई जे. पटेल]

रखी है। मैंने उनसे कह रखा है "यदि आप किसी भय के कारण ईमानदारी से अपनी राय व्यक्त नहीं करते तो इससे आपके मंत्री को अप्रसन्नता होगी, ऐसी स्थिति में अच्छा यह होगा कि आप चले जायें। मैं अन्य सचिव ले जाऊंगा।" मैं राय की स्पष्ट अभिव्यक्ति पर कभी अप्रसन्न नहीं होऊंगा। अंग्रेज अंग्रेजों के साथ इसी प्रकार का व्यवहार करते थे। अब हम जिम्मेदारी से अपना-अपना योगदान करते हैं आपने इस जिम्मेदारी को निभाने में अपना योगदान देने पर सहमति व्यक्त की है। उनमें से अनेक व्यक्तियों के बारे में, जिनके साथ मैंने काम किया है, मैं निस्संकोच कह सकता हूं कि वे उतने ही देशभक्त, निष्ठावान व ईमानदार हैं, जितना कि मैं स्वयं हूं। जो लोग यह सोचते हैं कि नेताओं ने ये गारंटियां देने में गलती की है वे उनके मन को नहीं समझते, वे नहीं जानते कि क्या हुआ होता। वे अब भी कुछ नहीं जानते। अब भी कठिन समय हमारे आगे है। बहुत कठिन परिस्थितियों में की गयी सुरक्षा व्यवस्था में हम यहां पर बातें कर रहे हैं। ये लोग माध्यम हैं। इनको हटा देने की स्थिति में मुझे समूचे देश में अराजकता की तस्वीर के अलावा कुछ नजर नहीं आता। मेरी कठिनाई यह है कि हमारे पास व्यक्तियों की कमी है। प्रान्तों की भी यही कठिनाई है और वे अधिक व्यक्ति भेजने की मांग कर रहे हैं। हमने लगभग 300-400 व्यक्तियों की भर्ती के लिए एक विशेष आयोग नियुक्त किया है। हाल ही में उनका चयन किया गया है। उनका चयन भारतीय सिविल सेवा संवर्ग में से नहीं किया गया। उनको कोई अनुभव नहीं है। परन्तु फिर भी हम कार्य कराने के माध्यम चाहते हैं। वे इन लोगों से सीख लेंगे।

अब आप क्या करना चाहते हैं? आप निर्णय कीजिए। मेरी आपको यह सलाह है कि संसद के सभी सदस्यों को सेवाओं का समर्थन करना चाहिए, सिवाय उस मामले के जिसमें सेवा के किसी सदस्य ने दुर्व्यवहार किया हो या अपने कर्तव्य पालन में गलती की हो या अपने कर्तव्य पालन से जी चुराया हो। ऐसे मामले को मेरे ध्यान में लाइये। मैं किसी को नहीं छोड़ूंगा, चाहे वह कोई भी हो। परन्तु यदि सेवाओं के ये लोग अपनी सेवा से आपको पूरा लाभ बल्कि अधिक लाभ पहुंचा रहे हों तो आपको उनकी प्रशंसा करनी चाहिए। जो समय बीत गया है, उसे भूल जाइए। हम अंग्रेजों के साथ अनेक वर्षों तक लड़े। मैं उनका कट्टरतम शत्रु था और वे मुझे ऐसा ही समझते थे, परन्तु मैं एक स्पष्टवादी व्यक्ति हूं और इसलिए मुझे एक ईमानदार मित्र मानते हैं। गांधी जी ने हमें क्या सिखाया है? आप गांधी की विचारधारा, गांधी दर्शन, प्रशासन चलाने के लिये गांधी के तरीके की बात करते हैं। बहुत अच्छी बात है। परन्तु आप जेल से बाहर निकलते ही कहते हैं "इन व्यक्तियों ने मुझे जेल में डाला था, अब मैं इनसे बदला लूंगा" यह तो गांधी का तरीका नहीं है। यह तो उससे कहीं दूर भटक जाना है।

इसलिए, परमात्मा के लिए, हमें समझना चाहिए कि हम कहां हैं। आज यदि आप सेवा से कुछ ग्रहण करना चाहते हैं तो आप उनके दिल तक पहुंचिए, परन्तु हाथ में लाठी लेकर यह मत कहिये "आपको गारंटी कौन देगा? हमारी संसद सर्वोच्च सत्ता संपन्न है।" आपकी सर्वोच्च सत्ता क्या इस प्रकार की बात के लिए है? क्या अपने वचन से मुकर जाने के लिए है? यदि आप ऐसा करेंगे तो यह सर्वोच्च सत्ता सम्पन्नता कुछ ही दिनों में समाप्त हो जायेगी। मेरी आपसे यही अपील है, ईमानदारी से अपील है। आप इस बात को याद रखिये, इसे प्रान्तों तक पहुंचाइये और कांग्रेस-जनों तक भी, जो बाहर काम कर रहे हैं। प्रशासन चलाने का यही तरीका है। अन्यथा, यह समाप्त हो जाएगा। और जब देश में स्थिरता आ जाएगी,

जब यह काफी मजबूत बन जाएगा तब यदि आप कोई परिवर्तन करना चाहेंगे तो सेवा के अधिकारियों को उसके लिये राजी करना कठिन नहीं होगा। यदि राजाओं-महाराजाओं को अपना राज्य छोड़ देने के लिये राजी किया जा सकता है तब सेवाओं के अधिकारियों के साथ, जो हमारे अपने लोग हैं जिनके बच्चे भी इस देश में सेवा करेंगे और जिन्होंने अपने देश के लिए दिन और रात परिश्रम किया है, अन्यथा बात कैसे हो सकती है। वे ऐसे लोग हैं जो सम्मान, गौरव, प्रतिष्ठा चाहते हैं और जनता के प्यार के पात्र हैं। ऐसे लोग बहुत कम होंगे जो देश के शत्रु कहलाने के लिए सेवा करेंगे। इसलिए उनके लिए अपमानजनक रूप में मत बोलिये और मेरी आप से अपील है कि मेरे शब्दों पर विचार करें और अपना निर्णय दें।

***श्री महावीर त्यागी:** मैं जानना चाहता हूं कि अपने भाषण के दौरान मैंने जो प्रश्न पूछा था, क्या उसका उत्तर श्री मुंशी देंगे अथवा माननीय सरदार पटेल देंगे। क्या मैं अपने प्रश्न को दोहरा दूं?

***अध्यक्ष:** यह आवश्यक नहीं है। आपका प्रश्न पूछा जा चुका है और यदि इस अनुच्छेद के प्रभावी सदस्य उत्तर देना चाहेंगे तो वह देंगे।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मैं प्रस्ताव करता हूं कि प्रश्न मतदान के लिए रखा जाये।

***अध्यक्ष महोदय:** प्रश्न यह है:

"कि प्रश्न अब मतदान के लिए रखा जाए—

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** श्री मुंशी।

***श्री के.एम. मुंशी:** सरदार पटेल के भाषण के बाद मैं कुछ कहना उचित नहीं समझता।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों को मतदान के लिए रखूंगा।

***श्री एच.वी. कामत:** मैं संशोधन संख्या 124, 125 और 128 को मतदान के लिए नहीं रखवाना चाहता। मैं चाहता हूं कि प्रारूप समिति उन पर विचार करे।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में 'which he is from time to time serving' (जिसकी सेवा वह समय-समय पर करता रहता है)' **शब्दों के स्थान पर** 'as the case may be (यथास्थिति)' **शब्द रखा जाए।"**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में 'the same conditions' (उन्हीं सेवा शर्तों)' **शब्दों के स्थान पर** 'conditions (शर्तों)' **शब्द रखा जाए।"**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में 'and the same rights' (उन्हीं अधिकारों)' **शब्दों के स्थान पर** 'and rules (और नियमों)' **शब्द रखे जाएं।"**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में 'as respects disciplinary matters or rights' (अनुशासनीय विषयों के बारे में उन्हीं अधिकारों का अथवा उनके तुल्य अधिकारों का)' **शब्दों के स्थान पर** 'of conduct and discipline (आचरण तथा अनुशासन के)' **शब्द रखे जाएं।"**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में, प्रस्तावित नये अनुच्छेद 283-क में 'as similar thereto as changed circumstances may permit as that person was entitled to immediately before such commencement' **शब्दों के स्थान पर** 'as similar as changed circumstances may permit to what that person was entitled to immediately before such commencement' **शब्द रखे जाएं।"**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***श्री एच.वी. कामत:** मेरे विचार में आप इस बात से सहमत होंगे कि इस अनुच्छेद का मसौदा ठीक तरह तैयार नहीं किया गया है। महोदय क्या आप इस बात से सहमत नहीं हैं?

***अध्यक्ष:** मेरे सहमत अथवा असहमत होने से कुछ नहीं होगा। हमने सभा में मतदान करा लिया है। इसके बाद श्री नज़ीरुद्दीन अहमद के संशोधन हैं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** मैं उन पर जोर नहीं दे रहा। मैं उनको प्रारूप समिति के विचार लिए छोड़ता हूं।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि प्रस्तावित अनुच्छेद 283-क संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 283-क संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 307

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 307 के खण्ड (2) के स्थान पर निम्नलिखित खण्ड रखे जायें।

'(2) For the purpose of bringing the provisions of any law in force in the territory of India into accord with the provisions of this Constitution, the President may by order make such adaptations and modifications of such law, whether by way of repeal or amendment as may be necessary or expedient, and provide that the law shall, as from such date as may be specified in the order, have effect subject to the adaptations and modifications so made, and any such adaptation or modification shall not be questioned in any court of law.

(3) Nothing in clause (2) of this article shall be deemed—

(a) to empower the President to make any adaptation or modification of any law after the expiration of two years from the commencement of this Constitution; or

(b) to prevent any competent legislature or other competent authority to repeal or amend any law adapted or modified by the President under the said clause."

['(2) भारत के राज्य-क्षेत्र में किसी प्रवृत्त विधि के उपबंधों को इस संविधान के उपबंधों से संगत करने के प्रयोजन से, राष्ट्रपति आदेश द्वारा ऐसी विधि के ऐसे अनुकूलन और रूपभेद, चाहे निरसन या चाहे संशोधन द्वारा कर सकेगा जैसे कि आवश्यक या इष्टकर हों तथा उपबंध कर सकेगा कि वह विधि ऐसी तारीख से लेकर जैसी कि आदेश में उल्लिखित हो, ऐसे किये गये अनुकूलनों और रूपभेदों के अधीन रह कर ही प्रभावी होगी तथा ऐसे किसी अनुकूलन या रूपभेद पर किस न्यायालय में आपत्ति न की जायेगी।

(3) इस अनुच्छेद के खण्ड (2) की कोई बात–

(क) राष्ट्रपति को इस संविधान के प्रारम्भ से दो वर्ष की समाप्ति के पश्चात् किसी विधि का कोई अनुकूलन या रूपभेद करने की शक्ति देने वाली, अथवा

(ख) किसी सक्षम विधानमंडल या अन्य सक्षम प्राधिकारी को, राष्ट्रपति द्वारा उक्त खण्ड के अधीन अनुकूलन या रूपभेद की गई किसी विधि को निरसित या संशोधित करने से रोकने वाली, न समझी जाएगी।' "]

"कि अनुच्छेद 307 की व्याख्या 1 में 'but shall not include an Ordinance promulgated under section 88 of the Government of India Act, 1935 (परन्तु भारत शासन अधिनियम 1935 की धारा 88 के अधीन प्रख्यापित कोई अध्यादेश इसमें सम्मिलित नहीं होगा)' **शब्द अन्त में जोड़ दिए जाएं।"**

"कि अनुच्छेद 307 की व्याख्या 2 में 'has' **शब्द के स्थान पर** 'had' **शब्द रखा जाये** और 'continue to have' **शब्दों के पश्चात्** 'such' **शब्द अन्त:स्थापित किया जाये।**

"कि अनुच्छेद 307 की व्याख्या 3 **के स्थान पर यह रखा जाये–**

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

'Explanation III–Nothing in this article shall be construed as continuing any temporary law in force beyond the date fixed for its expiration or the date on which it would have expired if this Constitution had not come into force.' "

['*व्याख्या 3*-इस अनुच्छेद की किसी बात का यह अर्थ न किया जायेगा कि वह किसी अस्थायी प्रवृत्त विधि को, उसकी समाप्ति के लिये नियत तारीख से अथवा उस तारीख से, जिसको कि, यदि यह संविधान प्रवृत्त न हुआ होता तो, वह समाप्त हो जाती, आगे प्रवृत्त बनाये रखती है।' "]

महोदय, प्रारूप समिति का आशय यह है अनुच्छेद 307 के खण्ड (1) को ज्यों का त्यों रखा जाये। खण्ड (2) में एक प्रयोजन विशेष से भिन्नता लाई गई है। इस बात में कुछ दुविधा थी कि क्या राष्ट्रपति विद्यमान विधियों का अनुकूलन, रूपभेद, संशोधन अथवा निरसन कर सकेगा या नहीं और ऐसा करने पर क्या उसकी कार्यवाही को न्यायालय में प्रश्नगत किया जा सकेगा और उसकी कार्यवाही में किसी सीमा तक न्यायिक हस्तक्षेप किया जा सकेगा। वास्तव में, मूल खण्ड (2) में यह कहा गया है कि ऐसे अनुकूलनों पर विधि न्यायालयों में आपत्ति नहीं की जा सकेगी। परन्तु प्रारूप समिति का विचार यह था कि यह बात स्पष्ट कर दी जानी चाहिए कि जिस पर आपत्ति नहीं दी जा सकती वह केवल रूप है और अनुकूलन अथवा रूपभेद और ऐसी कार्यवाही के पीछे प्रयोजन की जांच का मामला खुला रखा जाना चाहिए। इस प्रयोजन के लिए हमने इस अनुच्छेद के खण्ड (2) का प्रारम्भ इन शब्दों से किया है:

"भारत के राज्य क्षेत्र में किसी प्रवृत्त विधि के उपबंधों को इस संविधान के उपबंधों से संगत करने के प्रयोजन के लिए..."

मूल प्रयोजन यही है और यदि अनुकूलन या रूपभेद किसी अन्य प्रयोजन के लिए किया गया है तो निस्संदेह ऐसा मामला न्यायालयों के कार्यक्षेत्र में आएगा। जहां तक वह प्रयोजन रखा गया है, यदि किसी शब्द या साधारण भिन्नताओं पर कोई आपत्तियां की जाती हैं तो उन्हें विधि न्यायालयों में नहीं ले जाया जा सकता।

इस संशोधन में जो दूसरा रूपभेद रखा गया है वह इस संबंध में राष्ट्रपति की शक्ति को खण्ड (3) (क) द्वारा इस संविधान के प्रारम्भ से दो वर्ष पश्चात् की अवधि तक सीमित करने के लिए है। दूसरा उपखण्ड (ख) मूल खण्ड (2) के पाठ से लिया गया है और यह स्पष्ट कर दिया गया है कि राष्ट्रपति चाहे कुछ भी करे, यदि समुचित प्राधिकारी किसी भी प्रवृत्त विधि में परिवर्तन करना चाहे तो उससे उसमें कोई रूकावट नहीं होगी, चाहे राष्ट्रपति ने उसका अनुकूलन क्यों न किया हो। वह संसद अथवा किसी राज्य के विधानमंडल के समक्ष कोई विधान लाने पर रोक का काम नहीं करेगा।

जहां तक व्याख्याओं के रूपभेदों का संबंध है, व्याख्या 1 संबंधी रूपभेद, इसके अर्थ को सीमित करने के लिए है। यह भारत शासन अधिनियम की धारा 88 के अधीन प्रख्यापित अध्यादेशों के संबंध में लागू नहीं होगा। इस बात का उपबंध वहां होना चाहिए था। यह एक कमी है जिसे हम दूर करने की व्यवस्था कर रहे हैं।

जहां तक नयी व्याख्या (3) का संबंध है, वह विद्यमान व्याख्या का विस्तृत रूप है।

अपना स्थान ग्रहण करने से पूर्व, मैं इस बात का उल्लेख करना चाहता हूं कि इस अनुच्छेद को अनुच्छेद 313 के साथ उलझाया नहीं जाना चाहिए, जो पिछले दिन पास किया गया था जिसमें राष्ट्रपति को किसी कठिनाई की स्थिति में इस संविधान में उपबंध का रूपभेद करने की शक्ति दी गई है। विचाराधीन अनुच्छेद राष्ट्रपति को बहुत सीमित शक्ति प्रदान करता है और यह केवल उन विधियों के बारे में है जिनके बारे में राष्ट्रपति को मंत्रणा दी जाती है कि वे संविधान के प्रयोजन को सिद्ध करने में बाधक हैं और रूपभेद करना आवश्यक है। यह अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि हमने अनुच्छेद 307 (1) में व्यावस्था की है कि भारत के राज्यक्षेत्र में प्रवृत्त सभी विधियां प्रवर्तन में रहेंगी, बशर्ते कि वे इस संविधान के उपबंधों के विरुद्ध न हों। यह बहुत आवश्यक अनुच्छेद है और मेरे द्वारा सुझाए गए रूपभेद इस बात को ध्यान में रखते हुए आवश्यक हैं कि अनुच्छेद के मूल प्रारूप में किसी त्रुटि की ओर हमारा ध्यान दिलाया गया है और मुझे आशा है कि सभा इस बात को समझेगी कि इन संशोधनों को प्रस्तुत करने में जो प्रयोजन हमारे मन में है वह बहुत सीमित है। राष्ट्रपति की शक्तियां ऐसी हैं जिन्हें कि संसद अथवा उपयुक्त विधानमंडल द्वारा रद्द किया जा सकता है तथा इनका केवल उसी कालावधि के दौरान प्रयोग किए जाने का विचार है जबकि न ही तो संसद् और न ही तो सम्भवतया राज्यों के विधानमंडलों के पास इतना समय होगा जिसमें इतने विस्तार से ध्यान दे सके जो हमारे देश में प्रवृत्त कतिपय विधियों में संशोधन करने के लिए आवश्यक हो। भारतीय स्वाधीनता अधिनियम के अनुसरण में जब भारत शासन अधिनियम, 1935 का अनुकूलन किया गया, उस समय कतिपय विधियों के बारे में कुछ इसी प्रकार की कार्यवाही की गई और यह भी उसी आधार पर होगा।

सामान्यतया, मुख्य रूपभेद एक अनौपचारिक स्वरूप के होंगे। सम्भवतया, अनेक स्थानों पर "गवर्नर जनरल" शब्दों को हटाना पड़ेगा और "राष्ट्रपति" शब्द रखना होगा तथा इसी तरह के अन्य परिवर्तन करने होंगे। जहां तक कि हमने इस संविधान में उपबंध किया है उसके सिवाय महत्वपूर्ण परिवर्तनों की सम्भावना नहीं है। यह सम्भव है कि संविधान में समाविष्ट मूल अधिकारों से उत्पन्न होने वाले कुछ परिवर्तन करने पड़ें।

इस बात को दृष्टिगत रखते हुए कि कुछ संशोधन रखे गए हैं, मैं एक तर्क की पूर्वावधारणा करूंगा। इन संशोधनों में यह सुझाव दिया गया है कि ये अनुकूलन संसद को करने चाहिएं। ठीक है, यदि संसद को ऐसा करना चाहिए अथवा संसद को राष्ट्रपति द्वारा संसद की ओर से की गई कार्यवाही का अनुमोदन करना चाहिए तो संसद संशोधनकारी विधान पास करके रूपभेद के इस प्रश्न को अपने हाथ में ले सकती है। इसका कारण यह है कि हमारा यह विचार है कि आरम्भिक अवधि के दौरान संसद के पास इस प्रयोजन के लिए समय नहीं होगा और यही कारण है कि हमने इस अनुच्छेद का प्रावधान किया है।

कुछ सुझाव दिए गए हैं कि इस विषय की जांच करने के लिए किसी न्यायाधिकरण अथवा समिति की नियुक्ति की जाए। इसे उन उपयुक्त प्राधिकारों पर छोड़ना होगा जो कि उचित समय पर इन अनुकूलनों को अपने हाथ में लेंगे। यदि उनका यह विचार होगा कि सरकार के पास जो तंत्र है वह इस प्रयोजन के लिए उपयुक्त है अथवा यह कि यह तंत्र अल्प रूपभेद कर सकते हैं, और यदि इतने बड़े पैमाने पर रूपभेद की अपेक्षा है कि लोकमत से परामर्श किया जाए अथवा न्यायाधीशों से परामर्श किया जाए तो यह समुचित कार्यपालक प्राधिकारी के लिए होगा कि वह ऐसी कार्यवाही करे जो वह आवश्यक समझे। भविष्य में न्यायाधिकरण नियुक्त करने अथवा या तो भारत सरकार द्वारा या प्रान्तीय

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

सरकारों द्वारा वर्तमान विधियों की जांच करने पर कोई रोक नहीं होगी। मुझे आशा है कि इन तर्कों से वे सदस्य संतुष्ट हो जायेंगे जिन्होंने कि संशोधन प्रस्तुत किए हैं तथा यह अनुच्छेद मेरे द्वारा प्रस्तुत संशोधनों से संशोधित किए जाने के पश्चात् संशोधित रूप में पास कर दिया जाएगा। महोदय, मैं अपना संशोधन प्रस्तुत करता हूं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** अध्यक्ष महोदय, मेरा प्रस्ताव है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) में, 'President may (राष्ट्रपति)' **शब्दों के पश्चात्** 'in consultation with the Chief Justice of the Supreme Court and the Chief Justices of the High Courts of Bombay, Madras and Bengal (सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश तथा बम्बई, मद्रास और बंगाल के उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायाधीशों के परामर्श से)' **शब्द अन्त:स्थापित किए जाएं।**

महोदय, अनुच्छेद 307 में एक उपबंध है—मैं खण्ड 2 का उल्लेख कर रहा हूं—जिसमें कहा गया है कि ऐसे किसी अनुकूलन या रूपभेद पर किसी विधि न्यायालय में आपत्ति नहीं की जाएगी। मैं इस उपबंध का विरोध नहीं करता, मैं इसके पक्ष में हूं। परन्तु यदि हम इतना कठोर उपबंध पास करने जा रहे हैं, तो यह आवश्यक है कि कोई ऐसा अनुकूलन तथा रूपभेद जो कि राष्ट्रपति करे, कम से कम देश के सर्वोच्च न्यायिक प्राधिकारी से परामर्श करके किया जाए। हम न्यायालयों द्वारा इस प्रश्न की जांच पर रोक लगा रहे हैं। यहां राष्ट्रपति शब्द का अर्थ है विधि मंत्री। केवल वह ही रूपभेदों तथा अनुकूलनों का प्रभारी होगा। राष्ट्रपति के पास इन विषयों में जाने का तनिक भी न तो समय होगा और न ही झुकाव। मैं चाहता हूं कि विधि मंत्री इन मुख्य न्यायाधीशों की सहायता ले। यह किसी भी प्रकार से कोई आलोचना नहीं है और न ही विधि मंत्री की दक्षता में विश्वास की कमी, परन्तु उद्देश्य यही है कि इसके हाथ मजबूत किए जाएं ताकि किसी प्रकार का कोई जोखिम न रहे। इसी दृष्टिकोण से मैंने इन संशोधनों का सुझाव दिया है।

***श्री एच.वी. कामत:** अध्यक्ष महोदय, मेरे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी की भाषा में, मैं उन "लोगों" में से हूं जिन्होंने संशोधनों की सूचना दी है। मेरे विचार में उनको संसदीय प्रथा तथा शिष्टाचार के अनुरूप इससे बेहतर शब्द का प्रयोग करना चाहिए था और संशोधनों की सूचना देने वालों का उल्लेख यदि माननीय सदस्यों के रूप में नहीं तो सदस्यों के रूप में तो करना चाहिए था। मेरे विचार में मेरे जिन सहयोगियों ने संशोधनों की सूचना दी है, उनके बारे में "लोगों" शब्द का प्रयोग किया जाना उचित नहीं है। तथापि, यह मैं प्रसंगवश कह रहा हूं।

मैं आपकी अनुमति से संशोधन संख्या 134 तथा 137 एक साथ प्रस्तुत करता हूं:

"कि सूची संख्या 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) में, "repeal or amendement" (चाहे निरसन या चाहे संशोधन)' **शब्दों के स्थान पर** 'alteration or repeal or amendment (चाहे परिवर्तन या चाहे निरसन या चाहे संशोधन)' **शब्द रखे जाएं।**"

"कि सूची संख्या 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (3) के उपखण्ड (ख) में, 'repeal or amend (निरसित या संशोधित)' **शब्दों के स्थान पर** 'alter or repeal or amend (परिवर्तित या निरसित या संशोधित)' **शब्द रखे जाएं।**"

यह लगभग औपचारिक संशोधन है तथा ये अनुच्छेद 307 के मूल प्रारूप के अनुरूप हैं। अनुच्छेद 307 में, जिस रूप में कि वह संविधान के मूल प्रारूप में था, यह कहा गया है:

"(1) ...भारत के राज्यक्षेत्र में संविधान के प्रारम्भ से पहले प्रवृत्त सभी विधियां वहां प्रवृत्त रहेंगी जब तक कि उन्हें किसी सक्षम विधानमंडल या अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा परिवर्तित या निरसित या संशोधित न किया जाये।"

मेरे विचार में यह उन परिवर्तनों के बारे में, जो कि किए जा सकते हैं, अत्यंत व्यापक वक्तव्य है। अत: मेरा विचार है कि "परिवर्तित" शब्द का बाद में न रखा जाना एक ऐसी कमी है जिसे कि इस सभा को दूर करना चाहिए। अत: मैंने संशोधन संख्या 134 तथा 137 प्रस्तुत किए हैं ताकि इस नए प्रारूप को अनुच्छेद 307 के मूल प्रारूप के अनुरूप बनाया जा सके। मेरे विचार में ये अधिक व्यापक हैं और हम जो कुछ भी व्यक्त करना चाहते हैं इनमें उसकी बेहतर अभिव्यक्ति होगी।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले** (मद्रास-जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं संशोधन संख्या 135 प्रस्तुत करता हूं जो कि मेरे नाम में है:

"कि सूची संख्या 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) में, **अन्त में** 'but placed before the Parliament for ratification (परन्तु ये अनुसमर्थन के लिये संसद के समक्ष रखे जायेंगे)' **शब्द जोड़े जाएं**।"

महोदय, मेरा विचार है कि जिस संशोधन की मैंने सूचना दी है, उसमें कुछ सिद्धान्त अन्तर्निहित हैं। इस अनुच्छेद पर बोलते हुए मेरे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने हमें बताया कि राष्ट्रपति को, आपातकालीन स्थिति के दौरान तथा उस समय भी जबकि विधानमंडलों का सत्र न चल रहा हो, शक्ति प्रदान करने हेतु संविधान में ऐसा उपबंध समाविष्ट किया गया है। महोदय, प्रान्तों के राज्यपाल अध्यादेश प्रख्यापित करते हैं और वे अपना यह कर्त्तव्य मानते हैं कि जब कभी भी विधानमंडलों का अधिवेशन आरम्भ हो, वे उन अध्यादेशों तथा कानूनों को, जो कि देश के हित में आवश्यक है, सम्बन्धित विधानमंडल के समक्ष रखें। संविधान में परिकल्पित रूप में, राष्ट्रपति संसद को उस निकाय के रूप में देख सकता है जिसे कि उसकी उन सभी कार्यवाहियों का अनुसमर्थन करना है जो कि राष्ट्रपति ने उस दौरान की है जब संसद का सत्र नहीं चल रहा था। हम राष्ट्रपति से केवल यही मांग कर रहे हैं कि उन्होंने संविधान के अनुरूप जो अनुकूलन या परिवर्तन किए हैं उन्हें वह सभा के समक्ष रखें, ताकि केवल देश को ही नहीं बल्कि संसद में जन प्रतिनिधियों को भी यह पता चले कि राष्ट्रपति ने विधानमंडलों अथवा संसद की अनुपस्थिति में क्या कार्यवाही की है। महोदय, मेरा विचार है कि देश के विधानमंडल अथवा संसद को यह सब कुछ जानने का अधिकार है, क्योंकि यह आशा की जाती है कि प्रत्येक सदस्य को इस बात की जानकारी रहे कि राष्ट्रपति ने आपातकालीन उपायों के रूप में उस दौरान क्या कुछ किया जबकि संसद का सत्र नहीं चल रहा था। मुझे विश्वास है कि प्रारूप समिति इस विषय पर विचार करेगी तथा मेरा संशोधन स्वीकार करेगी। इसके अलावा खण्ड (3) (ख) में यह स्पष्ट किया गया है कि "खण्ड (2) की कोई बात किसी सक्षम विधानमंडल या अन्य सक्षम प्राधिकारी को राष्ट्रपति द्वारा उक्त खण्ड के अधीन अनुकूलन या रूपभेद की गई किसी विधि को निरसित या संशोधित करने से रोकने वाली न समझी जाएगी।" अत: महोदय, मैं यह समझता हूं कि यह संशोधन प्रारूप समिति द्वारा स्वीकार किया जा सकता है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची संख्या 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) में, (i) उपखण्ड (क) में 'after the expiration of two years from the commencement of this Constitution (इस संविधान के आरम्भ से दो वर्ष की समाप्ति के पश्चात्)' **शब्दों के स्थान पर** 'after the Constitution of the Ministries of the Government of India or of the States as the case may be after the first general election under this Constitution (इस संविधान के अन्तर्गत प्रथम सामान्य चुनाव के पश्चात भारत सरकार अथवा राज्य सरकारों, जैसी भी स्थिति हो, की मंत्रिपरिषद गठित होने के पश्चात्)' **शब्द रखे जाएं;** और

(ii) उपखण्ड (ख) में 'or other competent authority ('या अन्य सक्षम प्राधिकारी)" **शब्द निकाल दिये जाएं।**"

महोदय, ये दो संशोधन प्रस्तुत करने के सम्बन्ध में मैं यह अवश्य कहूंगा कि जो दो खण्ड प्रस्तुत किए गए हैं, मैं उनके सिद्धान्त से पूरी तरह सहमत हूं। इस अन्तरिम अवधि में जबकि हम एक अत्यन्त त्वरित संक्रमणकाल से होकर गुजर रहे हैं, अनेक असंगतियां तथा कठिनाइयां पैदा होंगी और इसलिए यह आवश्यक है कि राष्ट्रपति को ऐसे अनुकूलन तथा रूपभेद करने के प्राधिकार दिए जाएं जो कि अपेक्षित हों। वर्तमान विधियों का अनुकूलन तथा रूपभेद करना होगा ताकि उन्हें नए संविधान में निर्धारित मानक के अनुरूप बनाया जा सके। जब भारत शासन अधिनियम, 1935 पास हुआ था, उस समय भी ऐसा ही किया गया था। इस सिद्धान्त से सहमत होते हुए भी मेरे संशोधन में उस अवधि को सीमित करने का प्रयास किया गया है जिनके दौरान राष्ट्रपति अनुकूलन तथा रूपभेद की अपनी इन शक्तियों का निर्वहन कर सकेगा। खण्ड 3 के उपखण्ड (क) में यह प्रस्ताव है कि इन अनुकूलनों तथा रूपभेदों को करने की राष्ट्रपति की शक्ति दो वर्षों तक सीमित होगी। मेरा संशोधन यह है कि दो वर्षों की इस अवधि के बजाय मैं इसे उस अवधि तक सीमित करना चाहता हूं जिस दौरान कि सामान्य निर्वाचन होंगे तथा केन्द्र और राज्यों में मंत्रिपरिषदें गठित होंगी। तत्पश्चात् केन्द्र तथा राज्यों में विधानमंडल पूरी तरह से कार्यरत होंगे। हम दो वर्षों की अवधि के भीतर संविधान के अंन्तर्गत सामान्य निर्वाचन करा सकते हैं। यदि ऐसा है तो यह एक असंगति पैदा होगी कि केन्द्र तथा राज्यों दोनों में विधानमंडल पूरी तरह से कार्यरत होंगे और फिर भी राष्ट्रपति को संविधान में संशोधन, परिवर्तन और रूपभेद करने की शक्ति होगी। इन विधानमंडलों के कार्यरत होने के बाद राष्ट्रपति की शक्ति समाप्त हो जानी चाहिए। इसके पश्चात् केवल विधानमंडलों को ही रूपभेद करने का अधिकार होना चाहिए। अत: ये रूपभेद करने की शक्ति उसी समय तक रहनी चाहिए जब तक कि अगले सामान्य निर्वाचन नहीं हो जाते तथा मंत्रिपरिषद् गठित नहीं कर ली जाती। इस अवधि को इससे अधिक बढ़ाने का कोई कारण नहीं है। यह हो सकता है कि सामान्य निर्वाचन में विलम्ब हो जाये तथा उस स्थिति में दो वर्षों की अवधि के पश्चात् तथा नए विधानमंडल बनने तक के समय में अन्तराल आ सकता है जबकि ऐसा अनुकूलन करने के लिए कोई भी प्राधिकारी न रहे। उन परिस्थितियों में मैं इस अवधि को उस समय तक की अवधि रखना चाहता हूं जब तक कि चुनाव न हो जाएं तथा मंत्रिपरिषदें गठित न हो जाएं।

मेरे दूसरे संशोधन का संबंध प्रस्तावित खण्ड (3) से है जो कि इस प्रकार है:

"इस अनुच्छेद के खण्ड (2) की कोई बात किसी सक्षम विधानमंडल या अन्य सक्षम प्राधिकारी को राष्ट्रपति द्वारा उक्त खण्ड के अधीन अनुकूलन या रूपभेद की गई किसी विधि को निरसित या संशोधित करने से रोकने वाली न समझी जाएगी।"

मैं "या अन्य सक्षम प्राधिकारी" शब्दों का लोप करना चाहूंगा। मैं इस बात को भली प्रकार समझ सकता हूं कि राष्ट्रपति द्वारा किया गया अनुकूलन किसी सक्षम विधानमंडल द्वारा परिवर्तित किया जा सकेगा, परन्तु मैं यह समझने में असमर्थ हूं कि आवश्यक परिवर्तन करने के लिए वहां अन्य कौन-सा सक्षम प्राधिकारी हो सकता है। अत: राष्ट्रपति के निर्णयों में परिवर्तन करने की यह शक्ति हमें सक्षम विधानमंडलों के लिए भी छोड़ देनी चाहिए, किसी अन्य प्राधिकारी के लिए नहीं। मैं यह जानना चाहूंगा कि विधानमंडलों से परे और कौन-सा सक्षम प्राधिकारी होगा जिसे कि आवश्यक परिवर्तन करने के लिए शक्ति दी जा सकेगी अथवा दी जानी चाहिए।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची संख्या 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2), 'and any such adaptation or modification shall not be questioned in any court of law (तथा ऐसे किसी अनुकूलन या रूपभेद पर किसी न्यायालय में आपत्ति न की जाएगी)' **शब्द निकाल दिये जाएं।**"

यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अनुच्छेद है जिसके द्वारा हम सभी वर्तमान विधियों को संविधान के उपबंधों के अनुरूप बनाना चाहते हैं तथा हम ऐसे अनुकूलन के लिए व्यवस्था उपलब्ध करा रहे हैं। राष्ट्रपति को एतद्द्वारा ऐसा करने का प्राधिकार दिया जा रहा है। मुझे उस पर कोई आपत्ति नहीं है। मेरे विचार में यह इस समय विद्यमान विधियों को केवल संविधान के उपबंधों के अनुरूप बनाने के लिए है और इसलिए मैं इस बात से बिल्कुल सहमत हूं कि इसके लिए राष्ट्रपति ही उचित प्राधिकारी हैं। परन्तु जिस बात पर मुझे आपत्ति है, वह यह है कि जो अनुकूलन उनके द्वारा किया जायेगा उस पर किसी न्यायालय में आपत्ति नहीं की जानी चाहिए। मान लीजिये कि यदि किया गया रूपभेद गलती से अथवा किसी अन्य कारण से वास्तव में इस खण्ड के आशय के अनुरूप नहीं है तथा इससे परे चला जाता है, तब वह कौन-सा प्राधिकारी है जो कि यह घोषणा करेगा कि अनुकूलन इस अनुच्छेद के आशय के अनुरूप नहीं है जो इस प्रकार है:

"भारत के राज्यक्षेत्र में किसी प्रवृत्त विधि को इस संविधान उपबंधों से संगत करने के लिए, आदि।"

परन्तु यह सुनिश्चित करने के लिए किस तंत्र की व्यवस्था की गई है कि इस खण्ड के प्रयोजन को आरम्भ में ही प्रभावी बनाया जाए? यदि आशय यह है कि ऐसे प्रत्येक मामले को उच्चतम नयायालय में ले जाना होगा तो यह काफी कष्टदायक बात होगी तथा खर्चीली भी होगी, क्योंकि संशोधित किए जाने वाला कानून काफी व्यापक होगा। अत: मेरा विचार है कि जो न्यायालय उस कानून को लागू करते हैं, उन्हें यह निर्णय करने की शक्ति दी जानी चाहिए कि क्या ऐसा अनुकूलन उचित है, अथवा नहीं। राष्ट्रपति के पास सभी विधियों की जांच करने तथा यह सुनिश्चित करने के लिए समय नहीं होगा कि इनका अनुकूलन संविधान के अनुरूप ही हो। यह सब कुछ विधि विभाग करेगा तथा विधि मंत्री तक को

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

भी इन सबकी जांच करने का समय नहीं होगा। यह कार्यविधि विभाग के क्लर्कों द्वारा किया जाएगा। हम यह नहीं चाहते कि भूतपूर्व विधानमंडलों द्वारा पास किए गए संसदीय अधिनियमों का साधारण क्लर्कों द्वारा संशोधन तथा अनुकूलन किया जाये और यह कि इस आधार पर भी कि वे संविधान के उपबंधों के अनुरूप नहीं हैं उन पर न्यायालय में आपत्ति न की जा सके।

अत: मैं यह चाहता हूं कि कानून के साधारणतंत्र पर विश्वास रखा जाये कि वह यह सुनिश्चित करे कि यदि अनुकूलन में कोई त्रुटि होती है तो न्यायालय को उसमें सुधार करने की शक्ति दी जानी चाहिए। यदि ऐसा नहीं किया गया तो अनेक गलतियां होंगी जिन्हें कि देश में कोई भी सही नहीं कर सकेगा। यदि आप यह चाहते हैं कि उच्चतम न्यायालय में मामला उठाया जाए तो मेरे विचार में प्रत्येक वादी के पास ऐसा करने की शक्ति नहीं होगी। मुझे नहीं मालूम कि क्या उच्चतम न्यायालय के पास भी ऐसा करने की शक्ति होगी। परन्तु मेरा विचार है कि उच्चतम न्यायालय में किसी भी बात की जांच करने की शक्ति अन्तर्निहित है। परन्तु, फिर भी, इस संविधान में हमें यह उपबंध निश्चित रूप से करना चाहिए कि अनुकूलन प्रथम खण्ड में दिए गए प्रयोजन से किया जायेगा तथा न्यायालय को यह शक्ति प्रदान की जायेगी कि वह एसे अनुकलन के सही होने के बारे में मूल्यांकन करे। अन्य संशोधनों पर मुझे कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु मैं नहीं समझता कि प्रारूप समिति यह स्पष्ट करेगी कि वह यह सुनिश्चित करने के लिए किस तंत्र की व्यवस्था कर रही है कि किए गए अनुकूलन केवल संविधान के उपबंधों के अनुरूप हों।

***पंडित ठाकुर दास भार्गव** (पूर्वी पंजाब-जनरल): महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) के स्थान पर यह रखा जाए:

'The President shall, as soon as may be after the commencement of this Constitution, by order, appoint a Committee of experts to examine all the laws in force in the territories of India by whichsoever authority enacted and to report to him within a period of 8 months if any or any portion of the laws in force is inconsistent with the provisions of this Constitution and what adaptations and modifications are necessary to bring into accord the inconsistent portions with the provisions of this Constitution. The Government shall forthwith take steps to repeal or amend such laws or portions of them as are not in accord with the provisions of this Constitution and unless such laws or portions of laws are repealed or amended by being brought within a further period of one year and four months from the date of report in accord with the provisions of this Constitution, they shall cease to be in force unless they are repealed or amended earlier by any competent authority or declared void by the courts.'

['राष्ट्रपति इस संविधान के प्रारम्भ होने के पश्चात् यथाशक्य शीघ्र आदेश द्वारा विशेषज्ञों की एक समिति नियुक्त करेगा जो भारत के राज्यक्षेत्रों में प्रवृत्त सभी

विधियों की जांच करेगी चाहे ये विधियां किसी भी प्राधिकारी द्वारा बनाई गई हों, तथा आठ मास की अवधि के भीतर उसे रिपोर्ट करेगी कि क्या कोई प्रवृत्त विधि अथवा इसका कोई भाग इस संविधान के उपबंधों के असंगत हैं तथा उन असंगत भागों को इस संविधान के उपबंधों से संगत करने के लिए कौन-कौन से अनुकूलन तथा रूपभेद आवश्यक है। सरकार ऐसी विधियों अथवा उनके भागों का जो कि इस संविधान के उपबंधों से संगत नहीं हैं, निरसन करने अथवा उनमें संशोधन करने के लिए तुरन्त उपाय करेगी और जब तक कि ऐसी विधियों अथवा ऐसी विधियों के भागों को रिपोर्ट की तारीख से एक वर्ष चार महीनों की अग्रेतर अवधि के भीतर इस संविधान के उपबंध से संगत बनाकर उनका निरसन अथवा संशोधन नहीं किया जाता, वे प्रवर्तन में नहीं रहेंगे जब तक कि उन्हें इससे पूर्व किसी सक्षम प्राधिकारी द्वारा निरसित अथवा संशोधित नहीं कर दिया जाता या न्यायालयों द्वारा शून्य घोषित नहीं कर दिया जाता।' "]

मैं यह भी प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (3) के स्थान पर यह रखा जाए:

'(3) for the purpose of bringing the provisions of the laws in force in the territory of India relating to fundamental rights guaranteed by this Constitution into accord with the provisions of this Constitution the President shall after the commencement of this Constitution appoint as soon as may be a Committee of experts to examine the laws in force in the territory of India with instructions to report if any or any portion of them is inconsistent with the provisions relating to fundamental rights and what adaptations and modifications are necessary to bring such inconsistent laws or portions of laws in accord with the provisions of this Constitution. The Government shall on the receipt of the report forthwith take steps to avoid repeal or amend such laws or portions of them as are not in accord with the guaranteed fundamental rights. Such laws or portions of them as are reported to be inconsistent and not in accord with the guaranteed fundamental rights shall cease to be in force after an year of the commencement of this Constitution if they are not avoided repealed or amended earlier.'

['(3) भारत के राज्यक्षेत्र में प्रवृत्त ऐसी विधियों के उपबंधों को जो इस संविधान में गारंटी दिए गए मूल अधिकारों से सम्बन्धित हैं इस संविधान के उपबंधों से संगत करने के प्रयोजन के लिए, राष्ट्रपति, इस संविधान के प्रारम्भ के पश्चात् भारत के राज्य क्षेत्रों में प्रवृत्त विधियों की जांच करने हेतु यथाशक्य शीघ्र विशेषज्ञों की एक समिति नियुक्त करेगा तथा उसे यह अनुदेश देगा कि वह यह रिपोर्ट दे कि क्या इनमें से कोई विधियां अथवा इनका कोई भाग मूल अधिकारों से सम्बन्धित उपबंधों के असंगत है और ऐसी असंगत विधियों तथा विधियों के भागों को इस संविधान से संगत करने के लिए कौन-कौन से अनुकूलन तथा रूपभेद आवश्यक हैं। रिपोर्ट प्राप्त होने पर सरकार ऐसी विधियों अथवा इनके भागों, जो कि गारंटी दिए गए मूल अधिकारों से संगत नहीं है, का परिवर्जन निरसन तथा संशोधन करने के लिए तुरंत उपाय करेगी। ऐसी विधियां अथवा उनके भाग जिनके बारे में कि ऐसी रिपोर्ट दी गई है कि ये असंगत हैं तथा गारंटी दिए गए मूल अधिकारों के अनुरूप नहीं हैं,

[पंडित ठाकुर दास भार्गव]

इस संविधान के प्रारम्भ से एक वर्ष के पश्चात् प्रवर्तन में नहीं रहेगी यदि उन्हें इससे पूर्व परिवर्जित, निरसित अथवा संशोधित नहीं किया जाता।' "]

मैं यह भी प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) में, 'made, and any such adaptation or modification shall not be questioned in any court of law (प्रभावी होगी तथा ऐसी किसी अनुकूलन या रूपभेद पर किसी न्यायालय में आपत्ति न की जाएगी)' **शब्दों के स्थान पर** 'made (प्रभावी होगी)' **शब्द रखे जाएं।**

यह भी कि:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) में, 'and any such adaptations or modifications shall not be questioned in any court of law (तथा ऐसे किसी अनुकूलन या रूपभेद पर किसी न्यायालय में आपत्ति न की जाएगी।)' **शब्दों के स्थान पर** 'except in so far as they are inconsistent with the provisions of this Constitution (सिवाय इसके कि जहां तक कि ये इस संविधान के उपबंधों से संगत नहीं हों)' **शब्द रखे जाएं।**

मैं यह भी प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) में 'except on the ground that the law so adapted or modified is not in accord with the provisions of this Constitution (सिवाय इस आधार पर कि इस प्रकार अनुकूलन या रूपभेद की गई विधि इस संविधान के उपबंधों से संगत नहीं है)' " **शब्द अन्त में जोड़े जाएं।**"

और यह भी कि...

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) तथा (3) **निकाल दिये जाएं।**"

महोदय ये संशोधन प्रस्तुत करने का मेरा प्रयोजन उन सभी उपबंधों को पूरी तरह प्रभावी बनाना है जो हम पहले ही पास कर चुके हैं, जिनके लिये अनुच्छेद 8 देखिये। अब इन वर्तमान विधियों को आसानी से दो प्रकार की विधियों में बांटा जा सकता है—मूल, गारंटी दिये गए अधिकारों से सम्बन्धित विधियां तथा अन्य मामलों से सम्बन्धित विधियां। मैं इन दोनों में अन्तर करना चाहता हूं और जैसा कि मेरे द्वारा प्रस्तावित संशोधनों से स्पष्ट है इनमें से कुछ संशोधन तो केवल गारंटी दिए गए अधिकारों से सम्बन्धित हैं तथा अन्य कुछ इस समय प्रवृत्त अन्य विधियों से सम्बन्धित हैं। अब मेरी इन शब्दों के प्रति घोर आपत्ति है कि "तथा ऐसे किसी अनुकूलन या रूपभेद पर किसी न्यायालय में आपत्ति न की जाएगी।" और यही

कारण है कि मैंने ये संशोधन प्रस्तुत किए हैं ताकि ये शब्द हटा दिए जाएं तथा इनके स्थान पर कुछ ऐसे शब्द रखे जाएं जिनसे कि अर्थ बिल्कुल स्पष्ट हो जाए। मैं इस खण्ड के आपत्तिजनक उपबंधों को हटाए जाने के लिए लगभग हताश हो गया हूं और इसीलिए मैंने यह प्रस्ताव तक भी किया है कि खण्ड (2) पूरा ही हटा दिया जाए। महोदय, मैं समझता हूं कि इस विषय पर पूरी तरह विचार नहीं किया गया है; मेरा तात्पर्य यह है कि इतना विचार नहीं किया गया है जितना कि किया जाना चाहिए था। यदि प्रस्ताव को इसी रूप में स्वीकार कर लिया जाता है जिस रूप में कि यह इस समय है, यदि श्री कृष्णमाचारी का प्रस्ताव पास हो जाता है तो उसका परिणाम यह होगा कि विधान मंडल नहीं अपितु सरकार अपने विधि विभाग के माध्यम से, विधि मंत्री नहीं अपितु सचिव अथवा क्लर्क लोग ये अनुकूलन तथा रूपभेद करेंगे और यह सभी अनुकूलन तथा रूपभेद कभी भी किसी विधानसभा अथवा विधानमंडल के समक्ष नहीं आएंगे। देश की मूल विधि कार्यपालिका आदेश से स्वत: ही अनुकूलित अथवा संशोधित हो जायेंगी और वह देश की विधि बन जाएगी। विधि अनुकूलित तथा संशोधित मानी जाएगी तथा इसके पश्चात् यह विधि इतनी अपरिवर्तनीय बन जाएगी कि न्यायालय में उस पर आपत्ति नहीं की जा सकेगी। मेरा निवेदन है कि हम अनुच्छेद 8 पास कर चुके हैं: जिसमें कहा गया है:

> "इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले भारत के राज्यक्षेत्र में प्रवृत्त सभी विधियां उस भाग तक शून्य होंगी जिस तक कि वे इस भाग के उपबंधों से असंगत हैं।"

अब उन सभी विधियों को जिन्हें शून्य घोषित करने के लिए आज न्यायालय को शक्ति प्राप्त है, इन अनुकूलनों द्वारा पवित्र तथा पक्का बनाया जा रहा है और यह अनुच्छेद 8 के खण्ड (2) के अनुसार नहीं है, जिसमें कि कहा गया है:

> "राज्य ऐसी कोई विधि नहीं बनाएगा जो इस भाग द्वारा प्रदत्त अधिकारों को छीनती है या न्यून करती है और इस खण्ड के उल्लंघन में बनाई गई कोई विधि उल्लंघन की मात्रा तक शून्य होगी।"

यदि ऐसा रूपभेद या अनुकूलन किया जाता है जिससे कि वास्तव में इस खण्ड का उल्लंघन होता है तो उस स्थिति में क्या होगा? उस विधि पर आपत्ति नहीं की जा सकती, कोई भी न्यायालय इस पर आपत्ति नहीं कर सकेगा, जिसका स्पष्ट अर्थ है कि जो कुछ भी हम अनुच्छेद 8 (1) तथा 8 (2) के माध्यम से दे रहे हैं, उसे चोर दरवाजे से हटाया जा रहा है। मेरा यह कहना नहीं है कि जिन्होंने यह प्रस्ताव बनाया है, उनकी यह इच्छा है, परन्तु मेरा नम्र निवेदन यह है कि इसका परिणाम यही होगा, अर्थात् इससे इसी प्रकार की स्थिति पैदा होगी।

मैं इस बात को उदाहरण देकर समझाता हूं। अनुच्छेद 13 को ही लीजिये। हमने इन अनुच्छेदों के अधीन किये गए उपबंधों से राजद्रोह की परिभाषा को ही बदल दिया। अनुच्छेद 13(3) के अन्तर्गत हमने "अधिकार के प्रयोग पर निर्बंधन....." से पूर्व "युक्तियुक्त" शब्द रख दिया है और इस प्रकार हमने देश के न्यायालयों को यह अवसर दिया है कि वे यह देखें कि क्या वे विशेष विधियां जो कि कठोर तथा दु:सह हैं, शून्य होनी चाहिएं अथवा नहीं। वे न्यायालय के अधिकार के अन्तर्गत आती हैं, तथा कोई भी न्यायालय यह घोषणा कर सकता है कि

[पंडित ठाकुर दास भार्गव]

अमुक-अमुक विधि अनुच्छेद 13 के शब्दों तथा भावना के विरुद्ध हैं और इसलिए शून्य हैं। परन्तु ज्यों ही अनुकूलन कर दिया जाता है—और वह ऐसा नहीं होगा जो विधानमंडल द्वारा किया गया हो, वरन् ऐसा होगा जो कार्यपालिका द्वारा किया गया है—और ऐसा अनुकूलन प्रयोजन सिद्ध करने में असफल रहे, यदि अनुच्छेद 8 के अनुरूप नहीं हो, तो किसी न्यायालय के पास यह शक्ति अथवा अधिकार नहीं होगा कि इस अनुकूलन को गलत घोषित कर सके, जिसका अर्थ यह होगा कि हम कार्यपालिका को ऐसी शक्ति सौंप रहे हैं जो कि हमने विधानमंडलों तक को भी नहीं दी है। यदि यह संसद 26 जनवरी, 1950 के पश्चात् इन मूल अधिकारों के सम्बन्ध में कोई ऐसी विधि पास करती है जो लोगों की स्वतंत्रता को न्यून करती हो, तो उसे न्यायालय में चुनौती दी जा सकती है तथा कोई भी न्यायालय यह कह सकता है कि जहां तक कि इस विधि से मूल अधिकारों सम्बन्धी उपबंधों का उल्लंघन हुआ, वहां तक संसद गलती पर थी। यदि अनुकूलन इस प्रकार किया जाता है कि इससे पूरा प्रयोजन सिद्ध नहीं होता तो हम अत्यन्त निस्सहाय बन जाते हैं। यह कहा जाता है कि ऐसा उपबंध है कि कोई भी विधानमंडल ऐसी कोई कार्यवाही कर सकता है जो वह आवश्यक समझे और ऐसी विधि का निरसन कर सकता है। बिल्कुल ठीक है। यही स्थिति है। क्या मैं पूछ सकता हूं कि क्या यह अधिकार पूर्णतः भ्रामक नहीं है? कौन-सा ऐसा प्रान्तीय विधानमंडल है जो कि इस निष्कर्ष पर पहुंचेगा कि राष्ट्रपति द्वारा किया गया अनुकूलन अथवा रूपभेद गलत है तथा वह राष्ट्रपति के निर्णयों पर एक अपीलीय न्यायालय के रूप में बैठेगा और नए सिर से कानून बनाएगा? कहां है वह सदस्य विशेष जिसे कि आवश्यक नए उपबंधों को लाने की सुविधाएं दी जाएंगी? हम सभी जानते हैं कि उन लोगों के मार्ग में कितनी रूकावटें हैं जो कि कानून बनाना चाहते हैं। मेरा निवेदन यह है जब ये अनुकूलन या रूपभेद एक बार कर लिए जाएंगे तो उन्हें बदलना अत्यन्त कठिन होगा। सरकार इन्हें नहीं बदलेगी। स्थानीय विधानमंडल उन्हें नहीं बदलेंगे तथा किसी प्राइवेट मेम्बर को उन्हें बदलने का अवसर नहीं मिलेगा। इसका यह स्पष्ट अर्थ हुआ कि ये अनुकूलन अथवा रूपभेद हमेशा बने रहेंगे, चाहे वे संविधान से संगत हों अथवा नहीं। देश का कानून कौन बनाता है? विधानमंडल, कार्यपालिका नहीं, अथवा विधि मंत्री के कार्यालय का सचिव या क्लर्क नहीं। यदि राष्ट्रपति भी कोई अध्यादेश जारी करता है तो वह अध्यादेश भी दो महीनों की अवधि के भीतर विधानमंडल के समक्ष रखा जाएगा, परन्तु जहां तक कि इन अनुकूलनों या रूपभेदों का सम्बन्ध है वे कभी भी विधानमंडलों के समक्ष नहीं रखे जाएंगे। अतः मेरा निवेदन है कि ये अनुकूलन कई प्रकार से दोषपूर्ण होंगे इन पर विधान मंडलों की मोहर नहीं लगेगी तथा न्यायालय इन रूपभेदों पर आपत्ति करने के लिए सक्षम नहीं होंगे।

महोदय, यह कहा जाता है कि पहला वाक्य, अर्थात "भारत के राज्य-क्षेत्र में प्रवृत्त किसी विधि को इस संविधान के उपबंधों से संगत करने के प्रयोजन से" पर्याप्त गारंटी है। मेरा निवेदन है कि यह कोई गारंटी नहीं है। मैं यह कहना चाहता हूं कि प्रयोजन तो है, परन्तु यदि प्रयोजन पूरा नहीं किया जाता, यदि अनुकूलन तथा रूपभेद सही नहीं है अथवा इतने उपयोगी नहीं हैं जितने कि मूल अधिकार हैं तो उसका क्या लाभ है? न्यायालयों को हस्तक्षेप करने की कोई शक्ति नहीं है। यदि आप कहते हैं कि "आवश्यक या समीचीन" शब्द इसमें हैं तथा न्यायालय इस बात की जांच कर सकता है कि क्या अनुकूलन आवश्यक या समीचीन हैं, तो मेरा निवेदन है कि "किसी न्यायालय में आपत्ति न की जाएगी" शब्द रखने में क्या तुक है? मेरी समझ में, श्री कृष्णमाचारी ने यह कहा कि छोटी-छोटी बातों पर प्रश्न नहीं उठाया जाना चाहिए और केवल प्रयोजन ही देखा जाना चाहिए।

अनुकूलन में कहा जा सकता है कि अमुक-अमुक प्रयोजन के लिए अनुकूलन किए गए हैं, परन्तु यह पर्याप्त नहीं है। न्यायालय प्रयोजन पर भी आपत्ति नहीं कर सकेंगे। प्रयोजन तो है, परन्तु इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि अनुकूलनों से प्रयोजन सिद्ध हो जाएंगे। यह कहा जा सकता है कि ऐसा उपबंध पुराने भारत शासन अधिनियम 1935 में धारा 293 के रूप में विद्यमान था निस्संदेह भारत शासन अधिनियम में वह धारा थी, परन्तु फिर भी अब प्रयोजन बिल्कुल भिन्न है। यहां इस संविधान में जो मुख्य परिवर्तन हमने किया है, वह यह है कि हमने कुछ मूल अधिकार दिए हैं। 1935 के अधिनियम में कोई मूल अधिकार नहीं थे। यदि आप देश की साधारण विधियों में अनुकूलन करते हैं तो मुझे चिन्ता नहीं होगी, बशर्ते कि आप लोगों के अधिकारों को हाथ न लगाएं। आप देश की सभी विधियों को संविधान के अनुरूप बना सकते हैं। परन्तु जब आप सामान्य लोगों के नाजुक अधिकारों को हाथ लगाते हैं और उनके मूल अधिकारों को हाथ लगाते हैं तब, मेरा निवेदन है कि यह मामला अत्यन्त महत्वपूर्ण बन जाता है। "किसी न्यायालय में आपत्ति न की जायेगी" शब्द भी नहीं है। पुरानी धारा 293 में आप देखेंगे कि न्यायालय की शक्तियां हटाई नहीं गई थीं। इस धारा में विधियां पहले की भांति न्यायालयों के अधिकार में थी। अब ये शब्द विशेष रूप से जोड़ दिए गए हैं कि अनुकूलनों तथा रूपभेदों पर किसी न्यायालय में आपत्ति नहीं की जाएगी। मेरी मुख्य आपत्ति इन शब्दों पर है।

अब मैं अपनी गौण आपत्ति पर आता हूं। हालांकि यह भी समान महत्व की है। मैं कहना चाहता हूं कि कार्यपालिका को इन विधियों का अनुकूलन करने का अधिकार नहीं दिया जाना चाहिए। मेरा प्रस्ताव है कि इन मूल अधिकारों के सम्बंध में विशेषज्ञों की एक समिति नियुक्त की जानी चाहिएं। जो इस प्रश्न की जांच करे। यह एक महत्वपूर्ण समिति होगी तथा देश के सर्वोत्तम व्यक्ति इसके सदस्य होने चाहिएं। वे विधियों की जांच करेंगे तथा राष्ट्रपति को रिपोर्ट देंगे कि वह सुनिश्चित करें कि अमुक-अमुक विधियां बनाई जाए, क्योंकि कानून बनाने की शक्ति विधानमंडलों के पास है तथा हम यह शक्ति किसी राष्ट्रपति को अथवा अन्य किन्हीं लोगों को प्रत्यायोजित नहीं कर सकते। इस समिति द्वारा रिपोर्ट दिए जाने के पश्चात् सरकार यह सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाएगी कि ऐसी असंगत विधियों का निरसन कर दिया जाए। इसमें मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि न्यायालय की शक्ति समाप्त नहीं हो जायेगी। इन मूल अधिकारों का सार यह है कि न्यायालय ही अन्तिम प्राधिकार है तथा न्यायालयों का ही अन्तिम क्षेत्राधिकार भी है। आखिरकार यदि न्यायालय इन अधिकारों की रक्षा नहीं करेंगे तो हम यह आशा कदापि नहीं रख सकते हैं कि कार्यपालिका ऐसा करेगी। वास्तव में आप उलटी गंगा बहा रहे हैं। भारत शासन अधिनियम 1935 में इन अधिकारों को बिल्कुल भी हाथ नहीं लगाया गया था। केवल वर्तमान विधियों पर ही विचार हुआ था, मूल अधिकारों का कोई उल्लेख नहीं था और इसलिए न्यायालयों का क्षेत्राधिकार नहीं हटाया गया था। यह सम्भव है कि अनुच्छेद 13 द्वारा गारंटी दिए गए मूल अधिकारों में अनुकूलन के दौरान इस प्रकार हेर-फेर किया जाए कि हम आने वाले अनेक वर्षों में उनमें परिवर्तन न कर सकें।

अत: महोदय, मुझे यह प्रतीत होता है कि आपने समस्त विश्व के सामने केवल ढिंढोरा पीटा है कि आपने ये मूल अधिकार दिए हैं। मैं यह नहीं कहता कि विधि मंत्री इस प्रकार व्यवहार करेंगे। मेरे विचार में वह इस प्रकार व्यवहार नहीं करेंगे परन्तु वह अपने कक्ष में किसी से यह कह सकते हैं कि वह इस मामले की जांच करें। मैं सम्भवतया इस बात से सहमत नहीं हो सकता कि यह शक्ति किसी भी प्राधिकारी को जिसमें कि राष्ट्रपति तथा विधि मंत्री तक सम्मलित हैं प्रत्यायोजित की जाए। विधानमंडल को ही इन कानूनों की जांच करने दी जानी चाहिए और

[पंडित ठाकुर दास भार्गव]

उसे इसका पता लगाना चाहिए कि क्या ये अनुकूलन आवश्यक हैं अथवा नहीं। कार्यपालिका को इस ढंग से देश के कानून को नहीं बदलना चाहिए। श्री कृष्णमाचारी ने कहा कि ये शब्द महत्वपूर्ण नहीं है। ठीक है, इन्हें निकाल दें और मेरी मुख्य आपत्ति भी समाप्त हो जाएगी। महोदय, 1947 में हमारे पास विधान सभा में एक विधेयक था जिसमें कि पुरानी विधियों का निरसन विधानमंडलों द्वारा किए जाने की मांग की गई थी। आप एक निरसनकारी विधेयक पुनः संविधान सभा में क्यों नहीं ला सकते? इन मूल अधिकारों के सम्बन्ध में लोग न्यायालय में जाएंगे तथा न्यायालय यह निर्णय दे सकेगा कि अमुक-अमुक विधि संविधान के उपबंधों के अनुकूल नहीं हैं। आप यह शक्ति न्यायालयों को क्यों नहीं दे देते? यदि आप लोगों को लाभ पहुंचाना चाहते हैं, तो उन्हें यह लाभ प्रत्यक्ष रूप में पहुंचाएं। जैसी स्थिति इस समय है, आप अपनी स्थिति का दुरुपयोग कर सकते हैं तथा लोगों के लिए संकट खड़ा कर सकते हैं।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रास-जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे मित्र श्री कृष्णमाचारी द्वारा प्रस्तुत संशोधन पर काफी अधिक आलोचना, पूर्ण गलतफहमी के कारण की गई है। इस बात को ध्यान में रखना आवश्यक है कि इस खण्ड को उद्देश्य क्या है। हमारे संविधान ने संविधान के ढांचे, शक्तियों के वितरण, विशेष प्राधिकारों में निहित शक्तियों, यूनिटों के विधानमंडलों तथा केन्द्रीय विधानमंडल के बीच संबंधों में कुछ मूलभूत परिवर्तन किए हैं। साथ ही हमारा उद्देश्य यह नहीं है कि हम कानून बनाने का अपना कार्य नए सिरे से आरम्भ करें, परन्तु हमारा उद्देश्य यह है कि हम केवल उन्हीं निषेधों तथा विशेष उपबंधों के अध्यधीन रहते हुए जिनका कि वर्तमान संविधान में प्रावधान है, पूर्व संविधान के अन्तर्गत आने वाली सभी कानूनों को ग्रहण करें। यह आवश्यक है कि उन सभी अनेक संविधियों, अध्यादेशों, अधिनियमों, अधीनस्थ अधिनियम तथा नियमों के बारे में जानें जो कि वर्ष 1935 में पहले अनुकूलन के पश्चात् इन बीस वर्षों में बनाए गए हैं। यदि प्रत्येक अनिधियम, प्रत्येक नियम तथा प्रत्येक आदेश को न्यायालयों की जांच के अध्यधीन रखा जाना है और यदि इस अनुकूलन की एक न्यायालय के पश्चात् दूसरे न्यायालय में जांच होनी है, तो इससे निस्संदे वकीलों तथा वादियों को तो अनेक सुअवसर उपलब्ध हो जाएंगे, परन्तु यह देश के व्यापक हित में नहीं होगा। अतः सम्पूर्ण विधान को नए संविधान में समाविष्ट करने के लिए आप पहले यह उपबंध करें कि वे अधिनियम प्रवर्तन में बने रहेंगे, जब तक कि वे संविधान के सिद्धान्तों के विरुद्ध न हों।

यह पहला सिद्धान्त है तथा इसे निर्धारित कर लेने के पश्चात् यह आवश्यक हो जाता है कि अनुकूलन के लिए उपबंध किया जाए। यदि ऐसा अनुकूलन दो वर्षों के भीतर किया जाना है जबकि संसद के पास नया संविधान बनाये जाने के परिणामस्वरूप विभिन्न विषयों से सम्बन्धित अत्यधिक कार्यभार होगा, तो संसद को अनुकूलन के कार्य से परेशानी में डालना एक नामसझी का काम होगा। इन परिजातियों में यह उपबंध किया गया है कि अनुकूलन सरकार द्वारा किया जायेगा। आप उस धारणा को लेकर न चलें कि दिल्ली में बैठा गवर्नर जनरल अथवा राष्ट्रपति ये सब अनुकूलन करेगा। सरकार की सहायता एक विशेषज्ञ समिति करेगी। मेरे मित्र ने जिन सलाहकार समितियों का सुझाव दिया है उनका उपयोग अनुकूलन के प्रयोजन के लिए किया जा सकता है, बशर्ते कि वे बहुत भारी भरकम न बन जाएं और अनुकूलन के कार्य में रुकावट न डालें। अनुकूलन शीघ्र करना होगा और इसके अतिरिक्त वह अन्य कार्य भी होगा कि जिसे कि संविधान के पास होने के तुरन्त बाद संविधान को प्रभावी बनाने के लिए संविधान सभा को अपने ऊपर लेना पड़ सकता है।

जिस रूप में यह अनुच्छेद सभा में प्रस्तुत किया गया है इस पर अपनी टिप्पणियां करने से पूर्व, यह आवश्यक है कि हम यह बात अपने दिमाग में रखें कि भारत सरकार शासन अधिनियम की धारा 293 में, जिसका अनुकूलन इस अनुच्छेद 283 में किया गया है, ठीक-ठीक क्या उपबंध है। धारा 293 के अन्तर्गत "हिज मैजेस्टी" को अनुकूलन की शक्ति दी गई थी। कोई समय सीमा निर्धारित नहीं की गई थी। प्रारूप समिति के सभापति ने जो कि इन दो वर्षों की सीमा निर्धारित करने के लिए जिम्मेदार थे, यह सोचा की अनुकूलन की शक्ति एक अनिश्चितकाल के लिए राष्ट्रपति में निहित नहीं होनी चाहिए। इस कार्य को शीघ्रतापूर्वक किया जाना चाहिए तथा अनुकूलन दो वर्षों के भीतर पूरा कर लिया जाना चाहिए। अतः दो वर्षों की यह सीमा रखी गई। 1935 के नए संविधान के पश्चात् धारा 293 के अन्तर्गत फेडरल कोर्ट के समक्ष पहले ही मामले में यह प्रश्न आया कि क्या अनुकूलन पर न्यायालय में आपत्ति की जा सकती है। तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश सर मारिस गायर ने यू.पी. केन्टोनमेंट के मामले में अपना निर्णय देते हुए कहा कि अनुकूलनों पर तनिक भी आपत्ति नहीं की जा सकती। हमने वर्तमान अनुच्छेद में आरम्भ के शब्दों में ही एक सीमा रख दी अर्थात् "भारत के राज्यक्षेत्र में किसी प्रवृत्त विधि के उपबंधों को इस संविधान के उपबंधों से संगत करने के प्रयोजन के लिए।" केवल इसी प्रयोजन के लिए राष्ट्रपति को अपनी इस शक्ति का प्रयोग करना है। यह अत्यंत आवश्यक, हितकारी, तथा श्रेयस्कर उपबंध है। अन्य उपबंधों तथा उप-नियमों के बारे में न्यायालयों में अपने अनुभव के आधार पर मैं साहसपूर्वक यह कह सकता हूं कि प्रत्येक नियम तथा प्रत्येक अधिनियम पर प्रहार करने की सामान्य प्रवृत्ति पाई जाती है और मैं यह कह सकता हूं कि यह उपबंध अत्यंत हितकारी तथा श्रेयस्कर है। इसे उच्चतम न्यायालय अथवा फेडरल कोर्ट पर पुनः छोड़ने के बजाए कि वह इस बात पर विचार करे कि क्या सर मारिस गायर के निर्णय का अनुसरण किया जाना है अथवा नहीं, या लाहौर उच्च न्यायालय में व्यक्त की कई विरोधी राय का अनुसरण किया जाना है अथवा नहीं, यह स्थिति स्पष्ट कर दी गई है कि अनुकूलन पर न्यायालय में आपत्ति नहीं की जायेगी। इसको सोच-समझकर रखा गया ताकि तुच्छ तथा सारहीन आपत्तियों को उठाए जाने से रोका जा सके। परन्तु यदि अनुकूलन संविधान के मुख्य उपबंधों से, संविधान के प्रयोजन ही से बहुत परे है तो न्यायालय को ऐसे अनुकूलन को शून्य घोषित करने का आवश्यक अधिकार प्राप्त होगा। इसका यह अर्थ नहीं कि प्रत्येक उप-नियम, प्रत्येक खण्ड, प्रत्येक उप-खण्ड, प्रत्येक अभिव्यक्ति को न्यायालय में परखा जाना होगा। यदि मूल प्रयोजन को दृष्टि में रखा गया है और यदि अनुकूलन इस प्रयोजन से परे नहीं है, तो उस पर न्यायालय में आपत्ति नहीं की जाएगी।

आखिरकार अनुकूलन अपरिवर्तनीय नहीं है। विधानमंडल इसमें हस्तक्षेप कर सकता है। यदि विधानमंडल सतर्क है और लोक राय के प्रति इतना संवेदनशील है कि प्रत्येक अनुकूलन की परख कर सके तो मेरे विचार में से उस समय ऐसा अधिनियम बनाने से कोई नहीं रोक सकता जब कोई अनुकूलन संविधान की भावना के अनुसार नहीं है। हम यह धारणा लेकर चल रहे हैं कि विधानमंडल अपने कर्तव्य के प्रति काफी जागरूक है, वह बहुत सतर्क है, बहुत योग्य है, परिश्रमी है तथा देश में इतने अधिक वकीलों के रहते जो कि निश्चय ही प्रत्येक उप-नियम की जांच-परख करेंगे और इतनी अधिक संख्या में लोगों के रहते, जिनके कि इससे प्रभावित होने की सम्भावना है, इस बात का कोई खतरा नहीं है कि सतर्क जनता तथा समान रूप से सतर्क वकीलों अथवा समान रूप से सतर्क विधायकों द्वारा इसकी ओर ध्यान न दिया जाए। विधायक सतर्क रहेंगे, वकील सतर्क रहेंगे तथा न्यायालय अधिनियमन में त्रुटि का निश्चित ही पता चला लेंगे। इन परिस्थितियों में

[श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

मेरा निवेदन है कि यह अत्यन्त श्रेयस्कर उपबंध है। इस बात को लेकर पहले ही काफी आलोचना है कि इस संविधान का ही आशय वकीलों को लाभ पहुंचाना है। इस संविधान में यह उपबंध है कि संविधान के अनुकूलन पर न्यायालय में आपत्ति नहीं की जाएगी, एक अत्यंत हितकारी उपबंध है।

जहां तक विधानमंडल की हस्तक्षेप करने की शक्ति का सम्बन्ध है, यह ऐसा किसी भी समय कर सकता है। यह उपबंध राष्ट्रपति द्वारा मेरे मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव जैसे सलाहकारों की जो कि निश्चय ही आवश्यक रूपभेद करने में राष्ट्रपति को सहायता देने के लिए लोक हित की भावना रखते हों, समिति बनाने के मार्ग में बाधक नहीं हैं और इसके साथ-साथ यह स्थायी तौर पर आवश्यक रूप भेद करने में राष्ट्रपति को समर्थ बनाता है। जब तक कि राष्ट्रपति पागल न हो अथवा उनका मंत्रिमंडल पागल न हो वे मूल अधिकारों का उल्लंघन नहीं करेंगे। निस्संदेह, किसी विशेष खण्ड के सम्बन्ध में कहीं-कहीं सम्भवतया विधानमंडल भिन्न दृष्टिकोण अपना सकता है, परन्तु यदि तर्कसंगत आधार है, तो विधानमंडल इसकी ओर ध्यान दे सकता है तथा सरकार अथवा सम्बद्ध दल इस उपबंध को बदलने में सक्षम होंगे। इन परिस्थितियों में, मुझे इस बात पर खेद है कि इस उपबंध पर आपत्ति की गई है।

***अध्यक्ष:** यह सुझाव दिया गया है कि हम दोपहर बाद बैठक करें ताकि हम अधिक प्रगति कर सकें। अत: हम चार बजे पुन: बैठेंगे।

तत्पश्चात् सभा मध्याह्न भोजन के लिए 4 बजे म.प. तक के लिए स्थगित हुई।

सभा मध्याह्न भोजन के पश्चात् 4 बजे म.प. समवेत हुई।

अध्यक्ष महोदय, माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद पीठासीन हुए।

***श्री विश्वनाथ दास** (उड़ीसा-जनरल): अध्यक्ष महोदय प्रस्तावित संशोधन बिल्कुल भारत शासन अधिनियम 1935 के अनुसार है। यदि कोई अन्तर है भी, तो वह कठोरता के मामले में है। 1935 के अधिनियम में से जैसा कि इसे अनुकूलित किया गया है, इस धारा, अर्थात 293 का लोप कर दिया गया था। स्वाभाविक है कि इसके स्पष्टीकरण की आशा करने का हमारा अधिकार है। इसका लोप क्यों किया गया और इस संबंध में अब अन्तर करने की आवश्यकता क्यों महसूस की गई।

महोदय, मेरे माननीय मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव अपनी आपत्तियां स्पष्टत: प्रकट कर चुके हैं। उनमें से अधिकांश हमारी भी आपत्तियां हैं। मेरे माननीय मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने प्रारूप समिति का प्रतिनिधित्व करते हुए हमें कुछ उपदेश दिए। उन्होंने कहा कि संशोधन से विधानमंडल की शक्ति छीनी नहीं गई है। मैं उनसे पूछना चाहता हूं कि क्या उन जैसे विख्यात वकील के लिए यह आवश्यक है कि वे इन प्रारम्भिक सिद्धान्तों को हमें बतायें, जैसे कि इस सभा के सदस्य यह भी नहीं जानते हों कि एक उत्तरदायी सरकार की प्रणाली के अंतर्गत "राष्ट्रपति" का अर्थ है मंत्रिमंडल अथवा स्वयं प्रधान मंत्री। इसके अतिरिक्त उन्होंने यह भी कहा कि यह धारा 293 की मानता के अनुरूप है कि ब्रिटेन के मंत्रिमंडल द्वारा सपरिषद आदेश (आर्डर्स इन काउंसिल) जारी किए जा रहे थे। जब आप ब्रिटेन की सरकार पर विश्वास कर रहे थे, तो आप अपनी सरकार पर विश्वास क्यों नहीं कर सकते? यदि इसमें अविश्वास की कोई बात है तो मैं यह कहूंगा

कि यह धारणा दूसरे पक्ष में विद्यमान है। अत: यह कहना अनुचित तथा दुर्भाग्यपूर्ण है कि हम इस धारा में परिवर्तन इसलिए चाहते हैं क्योंकि हम मंत्रिमंडल में विश्वास नहीं करते। यह मंत्रिमंडल में हमारे विश्वास का प्रश्न नहीं है। इस अनुच्छेद में जो प्रस्ताव किया गया है वह यह कि प्रारूप समिति के अध्यक्ष माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर विधानमंडल की सभी शक्तियां भारत के विधि मंत्री माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को हस्तान्तरित कर देंगे। इस स्थिति में भी हमें शायद उतनी चिन्ता न हो, यदि वह अथवा उनका मंत्रिमंडल इस सार प्रश्न पर स्वयं कार्यवाही करे। अध्यक्ष महोदय, यह सुविदित है कि मंत्रिमंडलीय स्तर के मंत्री अत्यधिक व्यस्त रहते हैं उनके लिए यह संभव नहीं है कि वे उन सभी अधिनियमों की बारीकी से जांच करें जिनका कि इस सम्बन्ध में अनुकूलन किया जाना है।

इस प्रश्न पर चर्चा करते हुए हमें दो या तीन बातें ध्यान में रखनी होंगी। प्रथम, आपने संविधान में मूल अधिकारों का प्रावधान किया है जिनकी पहले कहीं परिकल्पना नहीं की गई थी, और न ही तो इनके बारे में 1935 के अधिनियम में सोचा गया था तथा ब्रिटेन की सरकार अथवा ब्रिटेन के मंत्रिमंडल ने तो इनकी ओर तनिक भी ध्यान नहीं दिया था। दूसरे, आपने संविधान में विशिष्ट उपबंध करके न्यायालय के क्षेत्राधिकार पर रोक लगा दी है। हमारे मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने एक बात सामने रखी है कि यह सर्वोच्च न्यायालय की न्यायिक घोषणा है। मैं उन्हें पुन: बताना चाहता हूं, जैसा कि पहले बता चुका हूं—साम्राज्यवादी प्रशासन प्रणाली के अन्तर्गत कार्यरत ब्रिटिश न्यायपालिका की घोषणाओं में मेरा विश्वास इतना नहीं है जैसा कि वह स्वतंत्र भारत की स्वतंत्र न्यायपालिका की घोषणाओं में होगा। जब तक कि ऐसा नहीं होता, मैं उनसे तथा इस सभा के माननीय सदस्यों से अनुरोध करूंगा कि न्यायपालिका में मेरा विश्वास इसकी सीमाओं के भीतर होगा।

महोदय, दो वर्षों की समय सीमा निर्धारित की गई है मुझे नहीं मालूम कि किस कारण से। कार्यपालिका को दी गई विशाल शक्तियां तनिक भी वांछनीय नहीं हैं। जब मेरे माननीय मित्र श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर कार्यपालिका पर भरोसा रखने के लिए अपने उपदेश हम पर थोप रहे थे, तो मैं स्तब्ध रह गया। मैं यह आशा नहीं करता था कि उन जैसे विख्यात विधिवेत्ता तथा वकील हमारी कार्यपालिका में हमारे विश्वास के संबंध में हमें उपदेश देंगे। मैं उनसे अनुरोध करूंगा कि वह अपने तर्क को और आगे बढ़ाएं। अवश्य ही, सभी प्रकार का विश्वास तो रखा जा सकता है। परन्तु फिर कोई कानून बनाने की आवश्यकता ही क्या है। सब कुछ प्रशासन पर ही छोड़ दें। कोई भी कानून न बनायें। कोई संविधान न रखें, मूल अधिकारों की कोई आवश्यकता नहीं, क्योंकि हमारे यहां जनता द्वारा निर्वाचित उत्तरदायी सरकार है! उनकी जैसी ख्याति वाले अत्यन्त बुद्धिमान तथा सुयोग्य विधिवेत्ता से हमें ऐसी आशा नहीं थी।

महोदय, मेरी इस संबंध में शिकायत है कि सरकार ने अपनी पूरी स्थिति हमारे समक्ष स्पष्ट नहीं की है। मैं यह भली प्रकार समझता हूं कि सरकार का यहां प्रतिनिधित्व नहीं है तथा सरकार के सदस्य यहां पर सभा के सदस्य होने की अपनी हैसियत के नाते आते हैं। परन्तु निसंदेह यह सच है कि डॉ. अम्बेडकर भारत के विधि मंत्री भी हैं तथा यह उनकी जिम्मेदारी और कर्तव्य है कि वह हमें बताएं कि उन्होंने इस सम्बंध में अब तक क्या कदम उठाए हैं। यह एक बहुत बड़ा आदेश है जो कि वह चाहते हैं कि उन्हें दिया जाये। केन्द्र तथा प्रांतों के हजारों कानून प्रवर्तन में हैं, जिनमें कि ब्रिटिश सरकार द्वारा पास किए विनियम भी शामिल हैं। इन सभी को परिवर्तन में बने रहना है। मैं पूछता हूं कि क्या साधारण सदस्यों के लिए इन सभी को रूपभेदित करने के लिए गैर सरकारी विधान

[श्री विश्वनाथ दास]

का सहारा लेना सम्भव है? विधि मंत्रालय ने क्या किया है? मैं प्रारूप समिति से पुनः निवेदन करूंगा कि उन्होंने अब तक जो दृष्टिकोण अपनाया है तथा विधि मंत्रालय ने इस संबंध में अब तक जो कार्रवाई की है, उसमें कुछ लाभ नहीं हुआ है। मेरे माननीय मित्रों ने विभिन्न सुझाव दिये हैं।

***अध्यक्षः** आप इस विषय के सम्बंध में विधि मंत्रालय से किस प्रकार की कार्रवाई की आशा करते हैं?

***श्री विश्वनाथ दासः** मैं अब उसी पर आ रहा हूं। वास्तव में मैं अपना कर्तव्य निभाने में असफल रहूंगा यदि मैं यह न बता पाऊं। इसलिए मैं इसे दोहराता हूं। कोई भी अनुकूलन आरम्भ किए जाने से पूर्व, ब्रिटिश सरकार ने भारत सरकार तथा भारत सरकार के विधि विभाग से कहा कि सभी आवश्यक कानूनों की जांच की जाए। भारत सरकार अनुकूलनों का सुझाव दे रही थी तथा विधि मंत्रालय, जो कि उस समय भारत सरकार का विधि विभाग था, द्वारा सुझाए गए अनुकूलनों को अनुमोदित किया जा रहा था तथा उन्हें ब्रिटिश सरकार के अनुकूलनों के रूप में "सपरिषद आदेश" (आर्डर इन काउन्सिल) में प्रकाशित किया जा रहा था। इस संबंध में मेरी शिकायत यह है कि न तो विधि विभाग ने और न संविधान ने ही इस बारे में कुछ कार्रवाही की है। मैं आशा करता हूं उनको चाहिए था कि वे अनुकूलनों को तैयार रखते और उन्हें उन विधियों की जांच करनी चाहिए थी जो परिवर्तन में हैं।

***अध्यक्षः** बिना यह जाने कि संविधान कैसा होगा?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** (बम्बई-जनरल): मेरे मित्र की जानकारी पूर्णतः गलत है। वह नहीं जानते कि क्या किया जा रहा है।

***श्री विश्वनाथ दासः** यदि मेरी जानकारी गलत है तो मुझे प्रसन्नता होगी और यदि यह सब कुछ कर लिया गया है तो मुझे हर्ष होगा और इस स्थिति में मेरे मित्र द्वारा कम से कम अब तक सब कुछ सभापटल पर रख दिया जाना चाहिए था—जैसा कि मैंने पहले कहा और अब दोहराता हूं अपनी पूरी स्थिति हमारे समक्ष स्पष्ट कर देनी चाहिए थी और यह कहना चाहिए था "मेरे पास वे तैयार हैं। मुझे आदेश दें और मैं उन्हें प्रकाशित करा दूंगा।" मैं उन व्यक्तियों से सहमत नहीं हूं जो यह सोचते हैं कि मुख्य न्यायाधीश से परामर्श करने से मामले में सुधार होगा, तथा न ही उन माननीय सदस्यों से मैं सहमत हूं जिनका यह विचार है कि प्रतिक्रियायें संसद के समक्ष रख दी जायेंगी। भारतीय स्वाधीनता अधिनियम के अन्तर्गत अनुकूलनों को संसद के समक्ष रखा गया था। परन्तु उसका प्रभाव क्या रहा? विधानमंडलों के पास गैर-सरकारी सदस्यों के लिए इतना समय कहां है कि वे उतने विशाल कार्य को अपने हाथ में लें? उन परिस्थितियों में संसद की प्रतिक्रिया के लिए इन अनुकूलनों को संसद के समक्ष रखे जाने से कोई लाभ नहीं होगा।

माननीय सदस्यों के समक्ष एक अन्य प्रस्ताव रखा गया है और वह है एक विशेषज्ञ समिति गठित करने के बारे में। वह निश्चय ही उपयोगी तथा लाभदायक रहेगी। परन्तु मैं यह कहूंगा कि हम एक विशाल आदेश जारी कर रहे हैं और कार्यपालिका को महान जिम्मेदारी तथा प्राधिकार सौंप रहे हैं। अतः मेरा यह विचार है कि विधानमंडल के प्रति भी उचित रहेगा कि कुछ विख्यात विधिवेत्ताओं की

जो कि विधानमंडल के सदस्य भी हैं, एक समिति गठित की जाए जो विधि मंत्रालय को अपनी सिफारिशें प्रस्तुत करे ताकि मंत्रालय उन्हें मात्र कानूनी रूप दे। उनको कानूनी रूप देना विधि मंत्रालय की जिम्मेवारी होनी चाहिए। मैं अन्य सभी शक्तियों, महत्व तथा जिम्मेवारियों को जिस रूप में भी वे हैं, कार्यपालिका के हाथों में नहीं रखना चाहता। इस दृष्टिकोण से इस प्रश्न के बारे में, जहां तक मेरा सम्बन्ध है, मैं पूरी तरह से संतुष्ट हो जाऊंगा यदि माननीय विधि मंत्री या प्रारूप समिति यह कहे कि वे संविधान सभा की विशेषज्ञ समिति बनाने के लिए सहमत और इच्छुक हैं तथा विधानमंडल सभी कानूनों की जांच करेगा और यदि आवश्यक हुआ तो प्रान्तीय सरकारों से कहेगा कि वे सभी कानूनों की जांच करें तथा सभी अनुकूलन एक साथ रखे जायेंगे। स्वतंत्र भारत में जिम्मेवार सरकार बनने के पश्चात् इस बात की कल्पना तक भी नहीं की जा सकती कि ऐसे कानून रखे जाएं जोकि स्वयं गैर जिम्मेवार हों तथा जिनमें से कि अधिकांश अत्यन्त पुराने हो गए हों और दकियानूसी बन गए हों और जो कि लोगों की साथ-साथ रहने और कार्य की आज की आवश्यकताओं के अनुरूप न हों। इन परिस्थितियों में मैं प्रारूप समिति से तथा संविधान सभा के सदस्यों से अनुरोध करता हूं कि वे इस महत्वपूर्ण प्रश्न पर विचार करें।

***एक माननीय सदस्यः** अब प्रश्न मतदान के लिए रखा जाये।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरीः** महोदय, इस वाद-विवाद को ध्यानपूर्वक सुनने के पश्चात् मैं अपने मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव द्वारा व्यक्त किए गए दृष्टिकोण का समर्थन करना चाहता हूं। यह बात कदाचित निरर्थक प्रतीत होती है कि यदि विधानमंडल कोई प्रावधान पास कर देता है जो कि संविधान के अनुरूप नहीं है तो उसमें संतप्त किसी व्यक्ति को इस बात को न्यायालय के ध्यान में लाने का अधिकार होगा तथा न्यायालय को उस प्रश्न पर विचार करने से नहीं रोका जाएगा। मान लीजिए कि ऐसा कोई विधान पास किया जाता है जो कि संविधान के मूल अधिकारों के अनुरूप नहीं है, तब कोई व्यक्ति इस मामले को न्यायालय में ले जा सकता है तथा उस विधान को अवैध तथा शून्य घोषित करा सकता है। यह कुछ अजीब लगता है कि राष्ट्रपति अनुकूलन तथा रूपभेद की उसे प्रदत्त शक्ति के अन्तर्गत इस तरह का आदेश जारी करे अथवा उपबंध करे जो कि संविधान के अनुरूप न हो तो हम मामला न्यायालय में नहीं ले जा सकते। महोदय मेरे विचार में वहां इस नए प्रावधान के रद्द किये जाने की कोई आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि अब तक अनुकूलन का आदेश इस संविधान के उपबंधों के अनुरूप नहीं है तब तक निचले न्यायालयों का उस पर पूरा क्षेत्राधिकार होगा। परन्तु मेरे माननीय मंत्री श्री अल्लादी कहते हैं कि अभी हाल ही के निर्णय में फेडरल कोर्ट ने घोषणा की है कि किसी अनुकूलन के निरसन के लिए अथवा उसे शून्य घोषित करने के लिए लाए गए किसी वाद पर न्यायालय विचार नहीं करेगा। महोदय इसलिए मैं समझता हूं कि यह निरापद होगा तथा सभी सम्बधित व्यक्तियों के हित में होगा कि पण्डित ठाकुर दास भार्गव द्वारा प्रस्तावित स्वरूप का कोई संशोधन स्वीकार कर लिया जाए।

मैं यह भी कहना चाहूंगा कि इस अनुच्छेद द्वारा निर्धारित की गई दो वर्ष की अवधि बहुत लम्बी होती है। यदि इतनी अवधि रखी जाती है, तो कुछ मामलों में राष्ट्रपति तथा उनके सलाहकार इतने शीघ्र उपाय नहीं करेंगे जितने शीघ्र कि उन्हें करने चाहिए। मेरी राय में, जहां तक आदिवासी क्षेत्रों में न्याय उपलब्ध कराने का सम्बन्ध है, संविधान के पास किए जाने के पश्चात् तुरन्त कार्रवाई करना आवश्यक होगा। सदन को यह याद होगा कि पष्ठ अनुसूची के पैरा 5 में कुछ उपबंध रखे गए हैं जिनके आधार पर कि सिविल प्रक्रिया संहिता और दण्ड प्रक्रिया संहिता को आदिवासी क्षेत्रों में प्रवर्तनीय बनाया जा सकता है।

[श्री रोहिणी कुमार चौधरी]

परन्तु माननीय सदस्यों को यह जानकर आश्चर्य होगा कि हालांकि ऐसे लोगों के बीच मुकदमेबाजी हो सकती है जो कि आदिवासी समुदाय के नहीं हैं, जिन क्षेत्रों में आदिवासी लोगों की तनिक भी आबादी नहीं हैं, परन्तु वे पर्वतीय क्षेत्रों के अधिकार क्षेत्र के भीतर हैं, वहां सिविल प्रक्रिया संहिता तथा दण्ड प्रक्रिया संहिता लागू नहीं है। उदाहरणार्थ, वहां डिप्टी कमिश्नर का कोई भी सहायक जिसके पास कि कोई कानूनी शैक्षिक योग्यता नहीं है, किसी अभियुक्त को सात वर्षों तक की अवधि तक के कारावास का दण्ड दे सकता है, और वर्तमान नियमों के अन्तर्गत यदि दण्ड तीन वर्षों से अधिक का है, केवल तब ही अपील की जा सकती है। अन्यथा अपील का कोई अधिकार नहीं है। अन्य मामलों के संबंध में भी वहां सिविल प्रक्रिया संहिता और दण्ड प्रक्रिया संहिता लागू नहीं है। यह निर्धारित किया गया है कि न्यायालयों का मार्गदर्शन सिविल प्रक्रिया संहिता की भावना से अथवा दण्ड प्रक्रिया संहिता की भावना से होगा। महोदय, इस भावना का तनिक भी पता चला पाना अत्यन्त कठिन सिद्ध हुआ है। कई बार दण्ड प्रक्रिया संहिता की भावना का यह अर्थ लगाया जाता है कि दण्ड प्रक्रिया संहिता का कठोरता से अनुसरण न किया जाये और कई बार इसका यह अर्थ लगाया जाता है कि दंड प्रक्रिया संहिता का कठोरता से अनुसरण किया जाये। यदि मेरे मित्र डॉ. अम्बेडकर या अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर उन पर्वतीय क्षेत्रों में अपना विधि व्यवसाय चला रहे होते तो उन्हें यह पता लगा पाना कठिन प्रतीत होता कि सिविल प्रक्रिया संहिता की भावना अथवा दंड प्रक्रिया संहिता की भावना कहां विद्यमान है। इस पैरा के अन्तर्गत राज्यपाल यह घोषणा करने के लिए सक्षम होगा कि ऐसे अपराधों के विचारण में दण्ड प्रक्रिया संहिता लागू की जाएगी जिनके संबंध में कि पांच वर्ष या इससे अधिक की अवधि के कारावास का दण्ड अथवा निर्वासन का दण्ड अथवा मृत्यु दण्ड दिया जाना है। परन्तु जब तक कि कानून का अनुकूलन तुरन्त नहीं कर लिया जाता, संविधान का यह उपबंध केवल एक अपालित नियम बना रहेगा। यह एक बहुत ही मामूली कृपा होगी। मात्र एक क्षण के लिए कल्पना करें कि दिल्ली अथवा अजमेर, मारवाड़ में रह रहे किसी व्यक्ति पर दंड प्रक्रिया संहिता का अनुसरण किए बिना ही मुकदमा चला दिया जाए, उसे सिद्धदोष ठहरा दिया जाए तथा मृत्यु दण्ड भी दे दिया जाए। मैं यह भली प्रकार समझ सकता था यदि यह विधि उन मामलों पर लागू होती जहां कि मूल स्थानीय लोग अथवा आदिवासी लोग पक्षकार हों। परन्तु बात ऐसी नहीं है। यदि मामला विशुद्ध गैर आदिवासियों के बीच है अथवा एक आदिवासी और एक गैर-आदिवासी के बीच है तो भी दण्ड प्रक्रिया संहिता संहिता लागू नहीं होती और इस स्थिति में किसी भी कानूनी प्रक्रिया का पालन नहीं किया जाता, और किसी भी प्रकार से अपील करने के अधिकार की अनुमति नहीं दी जाती।

मेरा निवेदन है कि वर्तमान विधि को उन उपबंधों के अनुकूल बनाने के लिये, जिन्होंने कि इस बात में थोड़ी सी दया दिखाई है कि राज्यपाल दण्ड प्रक्रिया संहिता के कुछ प्रावधानों को किसी क्षेत्र विशेष में कुछ मामलों के संबंध में लागू किये जाने की घोषणा कर सकता है, विधि में संशोधन करके अथवा उसमें रूपभेद करने के उपाय किए जाने चाहिएं ताकि वह विधि शीघ्र प्रवर्तन में आए। अतः मैं इस अनुच्छेद का स्वागत करता हूं जो कि वर्तमान विधि में परिवर्तन अथवा उपांतरण की अनुमति देता है ताकि इसे संविधान के उपबंधों के अनुरूप बनाया जा सके। इसके साथ-साथ इस बारे में भी हमारी सुरक्षा की जानी चाहिए कि अनुकूलनों अथवा उपांतरणों के इन उपबंधों को इस प्रकार लागू न किया जाए जिससे कि

संविधान द्वारा दिए गए मूल अधिकारों में हस्तक्षेप हो। हस्तक्षेप के ऐसे मामलों में यह स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए कि हमें मामला न्यायालय में ले जाने का अधिकार होगा ताकि हम उस अनुकूलन को अविधिमान्य घोषित करवा सकें। अन्यथा जिस निर्णय को उद्धृत किया गया है उसे देखते हुए यदि आप इसे उसी रूप में छोड़ देते हैं तो जब राष्ट्रपति ऐसा कोई अनुकूलन करेंगे जोकि संविधान उपबंधों के अनुरूप नहीं है तो हम कोई कदम उठाने के लिये पूर्णतः शक्तिहीन हो जायेंगे।

***अध्यक्षः** समापन प्रस्ताव पहले ही प्रस्तुत हो चुका है। प्रश्न यह है:

"कि अब प्रश्न मतदान के लिए रखा जाये।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** अध्यक्ष महोदय, आरम्भ में मैं अपने माननीय मित्र श्री कामत से जो कि, मैं देख रहा हूं, इस समय यहां नहीं हैं, क्षमा मांगता हूं जिन्होंने कि मेरे वक्तव्य में मेरे द्वारा हुई छोटी सी भूल पर आपत्ति की जब कि मैंने उन माननीय सदस्यों का जिन्होंने संशोधन प्रस्तुत किये हैं, संशोधन प्रस्तुत करने वाले लोगों के रूप में उल्लेख किया था।

सदन को यह याद होगा कि मैंने प्रस्तुत किए जा रहे संशोधनों का पूर्वानुमान लगाने तथा अग्रिम रूप से उनका उत्तर देने का प्रयास किया था। इनमें से अधिकांश संशोधनों का, बहारहाल मेरे माननीय मित्रों श्री कामत, श्री मुनिस्वामी पिल्लै तथा प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना द्वारा प्रस्तुत किए गए संशोधनों का, उत्तर मैंने अग्रिम रूप से देने का प्रयास किया था। मेरे विचार में खण्ड (2) में जैसा कि यह खण्ड इस समय है प्रयुक्त शब्द इतने स्पष्ट हैं कि इस खण्ड के अन्त में रखे गये शब्दों, अर्थात् "कि ऐसे अनुकूलन तथा रूपभेद पर किसी न्यायालय में आपत्ति न की जाएगी" से सम्भवतया कोई भी परेशानी उत्पन्न नहीं होगी आरम्भ के शब्दों में पर्याप्त उपबंध किया गया है जिनमें कि विशेष रूप से यह कहा गया है कि अनुकूलन केवल भारत के राज्य क्षेत्र में प्रवृत्त किसी विधि के उपबंधों को इस संविधान के उपबंधों के अनुरूप बनाने के प्रयोजनों के लिए ही किया जाना चाहिए।

मेरे माननीय मित्र पण्डित ठाकुर दास भार्गव द्वारा प्रस्तुत किए गए संशोधन ही केवल ऐसे संशोधन हैं जिनके लिए अब उत्तर दिये जाने की आवश्यकता है। अपने संशोधन संख्या 188 में, जिसमें कि उन्होंने खण्ड (2) के स्थान पर एक अन्य खण्ड रखने का प्रस्ताव किया है, वह खण्ड (2) का तात्पर्य समझने में असफल रहे हैं। खण्ड (2) का तात्पर्य यह है कि जहां तक सम्भव हो, सरकार के पास उपलब्ध तंत्र किए जाने वाले अनुकूलनों के लिए आवश्यक मात्रा में सामग्री तैयार करेगा जो कि इस संविधान के प्रख्यापन के तुरन्त बाद राष्ट्रपति द्वारा सम्भवतया एक आदेश के रूप में प्रकाशित की जायेगी। यह आवश्यक होगा क्योंकि अनेक ब्यौरे होंगे, कुछ मामलों में छोटे-छोटे तथा कुछ अन्य मामलों में विभिन्न स्वरूप के, जिनके बारे में कि कार्यवाही की जानी होगी ताकि प्रवृत्त विधियों को संविधान के उपबंधों के अनुरूप बनाया जा सके।

मेरे माननीय मित्र द्वारा प्रस्तावित संशोधन में, उन्होंने यह सुझाव दिया है कि एक समिति नियुक्त की जानी चाहिए तथा वह समिति आठ महीनों के भीतर रिपोर्ट प्रस्तुत करे और यह कि कार्यवाही बाद में की जाए। संविधान के प्रख्यापित होने तथा इन आठ महीनों के बीच की अवधि में क्या होगा जो कि स्वाभाविक है कि समिति की रिपोर्ट आने तक बीत जायेंगे। स्पष्ट है कि यदि प्रवृत्त

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

विधियों को वास्तव में संविधान के उपबंधों के अनुरूप बनाना है तो इस दौरान इस प्रकार की किसी भी कार्यवाही का किया जाना असम्भव है। जैसे कि ये संशोधन प्रस्तुत करते समय मैंने अपनी टिप्पणियों में कहा था, सरकार को या संसद को संकल्प पास करने में कोई रुकावट नहीं है अथवा सरकार को इस मामले में पहलकदमी करने तथा एक समिति नियुक्त करने में कोई रुकावट नहीं है जो कि इस देश में कानून के ढांचे की समीक्षा करे, उसको आधुनिक बनाए तथा इसे उन सिद्धांतों के अनुरूप है जो कि संविधान में प्रतिपादित किए गए हैं। मेरे विचार में मेरे मित्र पण्डित ठाकुर दास भार्गव को संविधान के प्रख्यापित होने तक प्रतीक्षा करनी चाहिए तथा या तो एक विधेयक द्वारा अथवा एक संकल्प द्वारा सरकार से इस मामले में, उनके द्वारा दिए गए सुझावों की दृष्टि में, कार्यवाही करवानी चाहिए।

जहां तक खण्ड (3) में उनके संशोधन का सम्बन्ध है, यह संशोधन इस प्रकार का है कि यह उस गारंटी को समाप्त कर देता है जोकि द्वारा प्रस्तुत संशोधन के खण्ड (3) में दी गई है। उन्होंने जो कुछ किया है, वह केवल यह है कि उन्होंने खण्ड (3) में सुझाए गए अपने प्रस्ताव में वह सब कुछ समाविष्ट करने का प्रयास किया है जो उन्होंने एक अलग अनुच्छेद 307-क प्रस्तुत करने के बारे में मूलतः सोचा था। वह विचार जो उनमें उस समय था जब उन्होंने वह संशोधन तैयार किया जिसे कि वह नये अनुच्छेद 307-क के रूप में प्रस्तुत करना चाहते थे, खण्ड (3) में समाविष्ट कर लिया गया है अर्थात् यह कि मूल अधिकारों तथा देश की विधियों को मूल अधिकारों के संगत बनाए जाने के प्रश्न के सम्बंध में कुछ किया जाना चाहिए।

अतः मैं अनुभव करता हूं कि मेरे मित्र पण्डित ठाकुर दास भार्गव ने जिन्हें कि यह सभा एक अत्यन्त विख्यात वकील के रूप में जानती है तथा जो इस संविधान का निर्माण किये जाने में सहायता प्रदान करने हेतु काफी अधिक परिश्रम करते हैं इस मामले विशेष में अपने उल्लास को अपने विवेक पर हावी होने दिया है तथा एक संशोधन प्रस्तुत किया जो कि इस संशोधन विशेष के अनुकूल नहीं है जोकि इस समय सभा के समक्ष है। यह किसी अन्य बात के अनुकूल हो सकता है, यह एक स्वतंत्र प्रस्ताव के रूप में अनुकूल रह सकता है परन्तु यह इस संशोधन विशेष के अनुकूल नहीं है क्योंकि उनके संशोधन संख्या 188 से मेरे द्वारा प्रस्तावित संशोधन के खण्ड (2) के उद्देश्य की पूर्ति नहीं होती तथा उनका संशोधन संख्या 189 खण्ड (3) का प्रयोजन पूरा नहीं करता, यह कि.....

***पण्डित ठाकुर दास भार्गवः** जहां तक प्रस्तावित खण्ड (3) के बारे में संशोधन का प्रश्न है वह एक बिल्कुल अलग बात है। यह खण्ड (2) में संशोधन नहीं है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** वास्तव में उनके संशोधन संख्या 189 में कहा गया है–

"कि संशोधन संख्या 2 में, प्रस्तावित खण्ड (3) के स्थान पर यह रखा जाए।"

मेरे विचार में यह प्रतिस्थापन नहीं है क्योंकि इसका खण्ड (3), जैसा कि मैंने प्रस्तुत किया है, के उपबंधों से तनिक भी सम्बन्ध नहीं हैं और मैं समझता हूं कि इसके बारे में कोई रहस्य भी नहीं है क्योंकि खण्ड (3) की शब्दावली बहुत स्पष्ट है। यह शब्दावली बहुत स्पष्ट है। यह शब्दावली राष्ट्रपति को केवल दो वर्षों की अवधि के लिए अनुकूलन करने हेतु शक्ति प्रदान करती है।

***पंडित ठाकुर दास भार्गव:** यह संशोधन मूल अनुच्छेद के लिए है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** तब मैं अपनी गलती स्वीकार करता हूं। यदि मेरे माननीय मित्र आज प्रात: 9.35 बजे ऐसा संशोधन लाए हैं जोकि कार्यसूची में दिए गए संशोधन से सम्बन्धित न होकर अलग कोई चीज है तब तो मुझे उन सभी टिप्पणियों को वापस लेना होगा जो कि मैंने अभी की हैं। और केवल यह तर्क देना होगा कि क्योंकि इस बात का मेरे द्वारा प्रस्तावित संशोधन से कोई सम्बन्ध नहीं है अत: मैं इसका उत्तर देने में असमर्थ हूं तथा सम्भवतया उत्तर देने के लिए उचित प्राधिकारी भारत सरकार के माननीय विधि मंत्री होंगे अथवा उस भारत सरकार के विधि मंत्री होंगे जो कि 26 जनवरी के पश्चात् होगी। मेरा विचार है कि मेरे द्वारा प्रस्तावित संशोधनों से संशोधित अनुच्छेद 307 एक निश्चित प्रयोजन को पूरा करता है जिसे मेरे माननीय मित्र तथा सहयोगी श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर ने अपने विद्वतापूर्ण तर्कों द्वारा काफी उचित ठहराया है तथा प्रस्ताव के समर्थन में उनका तर्क स्वीकार करके सदन ठीक ही करेगा और इसीलिए मैं सदन से निवेदन करूंगा कि सदन मेरा संशोधन स्वीकार करे तथा मेरे द्वारा संशोधित रूप में अनुच्छेद 307 को पास करे।

***श्री अमिय कुमार घोष:** (बिहार-जनरल): मैं एक स्पष्टीकरण चाहता हूं कि वास्तव में इन शब्दों का क्या आशय है, अर्थात्-

"तथा ऐसे किसी अनुकूलन या रूपभेद पर किसी न्यायालय में आपत्ति न की जाएगी।"

क्योंकि यदि राष्ट्रपति किसी विद्यमान विधि को उन उपबंधों के अनुसार संशोधित अथवा रूपभेदित करता है जिन्हें कि हमने संविधान में पास किया है तब उसके कृत्य अधिकाराधीन होंगे तथा किसी न्यायालय में मामला उठाए जाने का कोई प्रश्न उत्पन्न नहीं होता। परन्तु यदि राष्ट्रपति ऐसा कुछ करता है जो कि खण्ड (2) की भावना के विरुद्ध हो अर्थात यदि वह ऐसी किसी विद्यमान विधि को संशोधित, रूपभेदित अथवा निरसित करता है जो कि संविधान में उल्लिखित उपबंधों से भिन्न है अथवा उनके प्रतिकूल है तो उसका कृत्य अधिकार-बाह्य है तथा निश्चय ही इस पर न्यायालय में आपत्ति की जा सकती है। अन्तिम दो पंक्तियों में जिस सीमा का प्रावधान किया गया है उसकी परिधि में वस्तुत: किस प्रकार के मामले की परिकल्पना की गई है? स्पष्ट है कि वे मामले जिनमें कि राष्ट्रपति ठीक इस अनुच्छेद द्वारा उसको प्रदत्त शक्तियों के आधार पर कार्यवाही करता है, इन उपरोक्त अन्तिम दो पंक्तियों के अन्तर्गत नहीं आते और इसलिए इस अन्तिम पंक्ति के अन्तर्गत सम्भवतया आने वाले मामले केवल एक वर्ग के ही हैं जिनमें कि राष्ट्रपति उस उपबंध के उल्लंघन में कार्य करता है जो इस अनुच्छेद में दिया गया है, क्योंकि आपने विद्यमान विधियों में संशोधन करने तथा उपांतरण करने के मामलों में राष्ट्रपति के लिए कोई प्रक्रिया अथवा नियम निर्धारित नहीं किए हैं और इसलिए शक्ति के अनियमित प्रयोग का प्रश्न ही पैदा नहीं होता।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मेरे माननीय मित्र इन उपबंधों के बारे में द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण को नहीं समझ पाए हैं, शायद स्पष्टीकरण में मुझसे कोई कमी रह गई हो। मैं चाहता हूं कि वह आरम्भ के शब्दों की ओर ध्यान दें। प्रारम्भिक शब्द न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप को उचित ठहराते हैं कि वह यह सुनिश्चित करे कि क्या अनुकूलन प्रारम्भिक शब्दों, "अर्थात् भारत के राज्यक्षेत्र में किसी प्रवृत्त विधि को इस संविधान के उपबंधों से संगत करने के प्रयोजन से" के अनुरूप किया गया है अथवा नहीं। यदि न्यायालय यह अनुभव करता है कि यह उस प्रयोजन के लिए नहीं है तो निस्संदेह अनुकूलन अधिकार-बाह्य होगा। परन्तु दूसरी ओर यदि अनुकूलन की शब्दावली आदि के बारे में केवल भिन्न दृष्टिकोण होने के

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

मामले का प्रश्न है तो यह निश्चय ही एक ऐसा मामला है जिसके बारे में हमारा विचार यह है कि उस पर किसी न्यायालय में आपत्ति नहीं की जानी चाहिए। किसी भी स्थिति में कोई भी बात किसी न्यायालय को इससे नहीं रोकेगी कि वह इस प्रश्न की जांच करे कि क्या अनुकूलन या खंड में आशायित प्रयोजन, अर्थात् "किसी प्रवृत्त विधि के उपबंधों को इस संविधान के उपबंधों से संगत करने के लिए" की पूर्ति के लिए था या अथवा नहीं। हम वास्तव में संविधान में यह नहीं कह सकते कि कौन-सा विशेष मामला अधिकार-बाह्य अथवा अधिकाराधीन होगा। प्रयोजन स्पष्ट रूप से दर्शाया गया है और मेरे विचार में हम इस खण्ड में दिए गए शब्दों से बाहर नहीं जा सकते।

***श्री अमिय कुमार घोष:** यदि क्षेत्राधिकार के अनियमित प्रयोग के मामले तथा जिनमें कि राष्ट्रपति की कार्यवाही इस उपबंध के अनुरूप है। पूर्वोक्त अंतिम दो पंक्तियों के अन्तर्गत नहीं आते तो निश्चय ही यह खतरा सदैव बना रहता है कि इसका अर्थन्वन इस प्रकार लगाया जा सकता है कि इसमें ऐसे मामले भी शामिल कर लिए जाएं जिसमें कि राष्ट्रपति क्षेत्राधिकार के बिना कार्यवाही करते हैं।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों को मतदान के लिए रखूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) में, 'the President may (राष्ट्रपति)' **शब्द के पश्चात्** 'in consultation with the Chief Justice of the Supreme Court and the Chief Justice of the High Court of Bombay, Madras and Bengal (सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश तथा बम्बई, मद्रास और बंगाल के न्यायालयों के मुख्य न्यायाधीशों से परामर्श से)' **शब्द अन्त:स्थापित किए जाएं।**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** संख्या 134

प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) में, 'repeal or amendment (चाहे निरसन या चाहे संशोधन)' **शब्दों के स्थान पर** 'alteration or repeal or amendment (चाहे परिवर्तन या चाहे निरसन हो या चाहे संशोधन)' **शब्द रखे जाएं।**"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** संख्या 135

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्लै:** महोदय मैं अपना संशोधन वापस लेने की अनुमति चाहता हूं।

संशोधन, सभा की अनुमति से, वापस लिया गया।

***अध्यक्षः** संशोधन संख्या 136, में दोनों भागों को मतदान के लिए अलग-अलग रखूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (3) में-'(1) उपखण्ड (ख) में 'after the expiration of the two years from the commencement of this Constitution (इस संविधान के आरम्भ से दो वर्ष की अवधि के पश्चात्), **'शब्दों के स्थान पर** 'after the Constitution of the Ministries of the Government of India or of the States, as the case may be, after the first General election under this Constitution (इस संविधान के अन्तर्गत प्रथम सामान्य चुनाव के पश्चात् भारत सरकार अथवा राज्य सरकारों, जैसी भी स्थिति हो, के मंत्रिपरिषद् गठित होने के पश्चात्)' **शब्द रखे जाएं।"**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"उपखण्ड (ख) में 'or other competent authority (या अन्य सक्षम प्राधिकारी)' **शब्द निकाल दिए जाएं।"**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (3) के उपखण्ड (2) में, 'repeal or amend (निरसित या संशोधित)' **शब्दों के स्थान पर** 'after or repeal or amend (परिवर्तित या संशोधित)' **शब्द रखे जाएं।**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) में 'and any such adaptation or modification shall not be questioned in any court of law (तथा ऐसे किसी अनुकूलन या रूपभेद पर किसी न्यायालय में आपत्ति न की जाएगी)' **शब्द निकाल दिये जाएं।"**

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची एक द्वितीय सप्ताह के संशोधन संख्या 2 में अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित

[अध्यक्ष]

खण्ड (2) तथा (3) निकाल दिये जाएं।"

प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।

अध्यक्ष: प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खण्ड (2) के स्थान पर यह रखा जाये:

'The President shall, as soon as may be after the commencement of this Constitution, by order, appoint a Committee of experts to examine all the laws in force in the territories of India by whichsoever authority enacted and to report to him within a period of 8 months if any or any portion of the laws in force is inconsistent with the provisions of this Constitution and what adaptations and modifications are necessary to bring into accord the inconsistent portions with the provisions of this Constitution. The Government shall forthwith take steps to repeal or amend such laws or portions of them as are not in accord with the provisions of this Constitution and unless such laws or portions of laws are repealed or amended by being brought within a further period of one year and four months from the date of report in accord with the provisions of this Constitution they shall cease to be in force unless they are repealed or amended earlier by any competent authority or declared void by the courts.'

['राष्ट्रपति इस संविधान के प्रारम्भ होने के पश्चात् यथाशक्य शीघ्र आदेश द्वारा विशेषज्ञों की एक समिति नियुक्त करेगा जो भारत के राज्यक्षेत्र में प्रवृत्त सभी विधियों की जांच करेगी, चाहे ये विधियां किसी भी प्राधिकारी द्वारा बनाई गई हों, तथा आठ मास की अवधि के भीतर उसे रिपोर्ट करेगी कि क्या कोई प्रवृत्त विधि या इसका कोई भाग इस संविधान के उपबंधों के असंगत हैं तथा इन असंगत भागों को इस संविधान के उपबंधों के असंगत है तथा इनके लिए कौन-कौन से अनुकूलन तथा रूपभेद आवश्यक हैं। सरकार ऐसे विधियां तथा उनके भागों को, जो कि इस संविधान के उपबंधों से संगत नहीं हैं, निरसन करने अथवा उनमें संशोधन करने के लिए तुरन्त उपाय करेगी और जब तक कि ऐसी विधियों या ऐसी विधियों के भागों की रिपोर्ट की तारीख से एक वर्ष चार महीनों की अग्रेतर अवधि के भीतर इस संविधान के उपबंधों से संगत बनाकर उसका निरसन अथवा संशोधन नहीं किया जाता, वे प्रवर्तन में नहीं रहेंगे जब तक कि उन्हें इससे पूर्व किसी सक्षम प्राधिकारी द्वारा निरसित अथवा संशोधित नहीं कर दिया जाता या न्यायालयों द्वारा शून्य घोषित नहीं कर दिया जाता।' "]

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद के प्रस्तावित खण्ड (3) के स्थान पर यह रखा जाए:

'(3) For the purpose of bringing the provisions of the law in force in the territory of India relating to fundamental rights guaranted by this Constitution into accord with the provisions of this Constitution, the President shall after the commencement of this Constitution appoint, as soon as may be, a committee of experts to examine the laws in force in the territory of india with instructions to report if any or any portion of them is inconsistent with the provisions relating to fundamental rights and what adaptations and modifications are necessary to bring such inconsistent laws or portions of laws in accord with the provision of this Constitution. The Government shall on the receipt of the report forthwith take steps to avoid, repeal or amend such laws or portions of them as are not in accord with the guaranteed fundamental rights. Such laws or portions of them as are reported to be inconsistent and not in accord with the guaranteed fundamental rights shall cease to be in force after one year of the commencement of this Constitution if they are not avoided repealed or amented earlier.'

['(3) भारत के राज्य क्षेत्र में प्रवृत्त ऐसी विधियों के उपबंधों को जो इस संविधान में गारंटी दिए गए मूल अधिकारों से संबंधित हैं इस संविधान के उपबंधों से संगत करने के प्रयोजन के लिए, राष्ट्रपति, इस संविधान के प्रारम्भ के पश्चात् भारत के राज्य-क्षेत्रों में प्रवृत्त विधियों की जांच करने हेतु यथाशीघ्र विशेषज्ञों की एक समिति नियुक्त करेगा तथा उसे यह अनुदेश देगा कि वह यह रिपोर्ट दे कि क्या इनमें से कोई विधियां अथवा इनका कोई भाग मूल अधिकारों से सम्बन्धित उपबंधों के असंगत है और ऐसी असंगत विधियों तथा विधियों के भागों को इस संविधान से संगत करने के लिए कौन-कौन से अनुकूलन तथा रूपभेद आवश्यक हैं। रिपोर्ट प्राप्त होने पर सरकार ऐसी विधियों अथवा इनके भागों को, जो कि गारंटी दिए गए मूल अधिकारों से संगत नहीं हैं, का परिवर्तन, निरसन तथा संशोधन करने के लिए तुरन्त उपाय करेगी। ऐसी विधियां अथवा उनके भाग जिनके बारे में कि ऐसी रिपोर्ट दी गई है कि ये असंगत हैं तथा गारंटी दिए हुए मूल अधिकारों के अनुरूप नहीं है, उस संविधान के प्रारम्भ से एक वर्ष के पश्चात् प्रवर्तन में नहीं रहेंगी यदि उन्हें इससे पूर्व परिवर्जित, निरसित अथवा संशोधित नहीं किया जाता।' "]

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खंड (2) में' 'made, and any such adaptation or modification shall not be questioned in any court of law (प्रभावी होगी तथा ऐसे किसी अनुकूलन या रूपभेद पर किसी न्यायालय में आपत्ति न की जाएगी)' **शब्दों के स्थान पर** 'made (प्रभावी होगी)' **शब्द रखे जाएं।**"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के प्रस्तावित खंड (2) में' 'and any such adaptation or modification shall not be questioned in any court of law (तथा किसी ऐसे अनुकूलन और रूपभेद पर किसी न्यायालय में आपत्ति न की जायेगी)' **के स्थान पर** 'except in so far as they are inconsistent with the provisions of this Constitution (सिवाय इसके कि जहां तक ये इस संविधान के उपबंधों के संगत नहीं हों)' **शब्द रखे जाएं**।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 2 में, अनुच्छेद 307 के खंड (2) में' 'except on the ground that the law so adapted or modified is not in accord with the provisions of this Constitution (सिवाय इस आधार पर कि इस प्रकार अनुकूलन या रूपभेद की गई विधि इस संविधान के उपबंधों से संगत नहीं है।)' **शब्द अंत में जोड़े जाएं**।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 307 के खंड (2) के स्थान पर निम्नलिखित खंड रखे जाएं:–

'(2) For the purpose of bringing the provisions of any law in force in the territory of India into accord with the provisions of this Constitution, the President may by order make such adaptations and modifications of such law, whether by way of repeal or amendment as may be necessary or expedient, and provide that the law shall, as from such date as may be specified in the order, have effect subject to the adaptations and modifications so made, and any such adaptation or modification shall not be questioned in any court of law.

(3) Nothing in clause (2) of this article shall be deemed:

(a) to empower the President to make any adaptation or modification of any law after expiration of two years from the commencement of this Constitution; or

(b) to prevent any competent legislature or other competent authority to repeal or amend any law adapted or modified by the President under the said clause.

That in Explanation I to article 307, the words 'but shall not include an Ordinance promulgated under section 88 of the Government of India Act, 1935' be added at the end.

That in Explanation II to article 307, the words 'has' the word 'had' be substituted and after the words continue to have the word 'such' be inserted.

That for Explanation III to article 307, the following be substituted:

Explanation III—Nothing in this article shall be construed as continuing any temporary law in force beyond the date fixed for its expiration, or the date on which it would have expired if this Constitution had not come into force.

(2) भारत के राज्य-क्षेत्र में किसी प्रवृत्त विधि के उपबंधों को इस संविधान के उपबंधों से संगत करने के प्रयोजन से, राष्ट्रपति आदेश द्वारा ऐसी विधि के अनुकूलन और रूपभेद, चाहे निरसन या चाहे संशोधन द्वारा कर सकेगा जैसे कि आवश्यक या इष्टकर हो तथा उपबंध कर सकेगा कि वह विधि ऐसी तारीख से लेकर जैसी कि आदेश में उल्लिखित हो, ऐसे किए गए अनुकूलनों और रूपभेदों के अधीन रह कर ही प्रभावी होगी तथा ऐसे किसी अनुकूलन या रूपभेद पर किसी न्यायालय में आपत्ति न की जाएगी।

(3) इस अनुच्छेद के खंड (2) की कोई बात–

(क) राष्ट्रपति को इस संविधान के प्रारंभ से दो वर्ष की समाप्ति के पश्चात् किसी विधि का कोई अनुकूलन या रूपभेद करने की शक्ति देने वाली, अथवा

(ख) किसी सक्षम विधानमंडल या अन्य सक्षम प्राधिकारी को राष्ट्रपति द्वारा उक्त खंड के अधीन अनुकूलन या रूपभेद की गई किसी विधि को निरसित या संशोधित करने से रोकने वाली, न समझी जाएगी।

"कि अनुच्छेद 307 की व्याख्या में 'but shall not include an Ordinance promulgated under Section 88 of the Government of India Act, 1935 (परंतु भारत शासन अधिनियम, 1935 की धारा 88 के अधीन प्रख्यापित कोई अध्यादेश इसमें सम्मिलित नहीं होगा)' **शब्द अंत में जोड़ दिये जाएं।**"

"कि अनुच्छेद 307 की व्याख्या 2 में 'has' **शब्द के स्थान पर** 'had' और 'continue to have' **शब्दों के पश्चात्** 'such' **शब्द अंतःस्थापित किया जाये।**'

"कि अनुच्छेद 307 की व्याख्या 3 के स्थान पर यह रखा जाये:

'Explanation III—Nothing in this article shall be construed as continuing any temporary law in force beyond the date fixed for its expiration or the date on which its would have expired of this Constitution had not come into force.' "

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 307 संशोधित रूप में, संविधान का अंग बने।"

[अध्यक्ष]

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 307 संशोधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 308

***अध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 308 पर आते हैं। डॉ. अम्बेडकर।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 308 के खंड (3) के स्थान पर यह रखा जाए:

'(3) Nothing in this Constitution shall operate to invalidate the exercise of jurisdiction by his Majesty in Council to dispose of appeals and petitions from, or in respect of any judgement, decree or order of any court within the territory of India in so far as the exercise of such jurisdiction is authorised by law, and any order of this Majesty in Council made as any such appeal or petition after the commencement of this Constitution shall for all purposes have effect as if it were as order or decreed made by the Supreme Court in the Exercise of the Jurisdiction conferred on such court by this Constitution.'

'(3) इस संविधान की कोई बात भारत राज्य क्षेत्र के किसी न्यायालय के किसी निर्णय, आज्ञप्ति या आदेश की, या के विषय में अपीलों और याचिकाओं को निपटाने के लिए सपरिषद् सम्राट के क्षेत्राधिकार के प्रयोग को वहां तक अमान्य न करेगी जहां तक कि ऐसे क्षेत्राधिकार का प्रयोग विधि द्वारा प्राधिकृत है तथा ऐसी किसी अपील या याचिका पर इस संविधान के प्रारंभ के पश्चात् दिया गया सपरिषद् सम्राट का कोई आदेश सब प्रयोजनों के लिए ऐसे प्रभावी होगा मानो कि वह उच्चतम न्यायालय द्वारा उस क्षेत्राधिकार के प्रयोग में, जो ऐसे न्यायालय को इस संविधान द्वारा दिया गया है, दिया गया कोई आदेश या आज्ञप्ति हो।' "

और यह भी:

"कि अनुच्छेद 308 के खंड (3) के पश्चात् यह नया खंड अंत:स्थापित किया जाए:

'(3a) On and from the date of commencement of this Constitution the jurisdiction of the authority functioning as the Privy Council in a State for the time being specified in Part III of the First Schedule to entertain and dispose of appeals and petitions from or in respect of any judgement, decree or order of any court within that State shall cease, and all appeals and other proceedings pending before the said authority on the said date shall be transferred to, and disposed of by the Supreme Court.'

'(3क) इस संविधान ने प्रारंभ की तारीख पर और से प्रथम अनुसूची के

भाग 3 में उल्लिखित किसी राज्य में अंत: परिषद् के रूप में फिलहाल कृत्यकारी प्राधिकारी का उस राज्य के किसी न्यायालय के किसी निर्णय, आज्ञप्ति या आदेश की अपील या याचिका को ग्रहण या निपटाने का क्षेत्राधिकार समाप्त हो जाएगा तथा ऐसे प्राधिकारी के समक्ष उक्त तारीख को लम्बित सब अपीलें और अन्य कार्यवाहियां उच्चतम न्यायालय को भेज दी जाएंगी और उसके द्वारा निपटाई जायेंगी।' "

महोदय, प्रथम संशोधन का प्रयोजन केवल यह है कि प्रिवी कौंसिल द्वारा ऐसी अपीलों को निपटाने के लिए उसके प्राधिकार को जारी रखा जाये जो अपीलें कि इसके समक्ष उस विधि के अंतर्गत लम्बित पड़ी हुई हो सकती हैं, जिसे कि संविधान सभा ने हाल ही में पास किया—अर्थात् धारा 4—यदि वे 26 जनवरी, इसी तारीख को वह तारीख मानते हुए जबकि यह संविधान अस्तित्व में आएगा—से पूर्व अंतिम रूप से नहीं निपटायी गयी हो। महत्वपूर्ण शब्द है "अपील को निपटाने के लिए" अपील ग्रहण करने की कोई शक्ति नहीं हैं और अन्य महत्वपूर्ण शब्द हैं "ऐसे क्षेत्राधिकार का प्रयोग विधि द्वारा प्राधिकृत है।" अर्थात् हाल ही में पास किए गए अधिनियम का उल्लेख। प्रिवी कौंसिल का अन्य कोई क्षेत्राधिकार नहीं होगा, इससे अधिक क्षेत्राधिकार नहीं होगा जो कि हमने प्रदत्त किया है। परामर्श करके ऐसी व्यवस्था की गई है कि जहां तक संभव हो उस तारीख तक जिस तारीख को कि यह संविधान अस्तित्व में आएगा, प्रिवी कौंसिल उन सभी मामलों को निपटा चुकी होगी जोकि उस विशेष अधिनियम के अंतर्गत उसके लिए छोड़े गए थे। परन्तु यह हो सकता है कि या तो किसी मामले में अभी अंशत: सुनवाई हुई हो अथवा किसी मामले का निपटान उस अर्थ में हो चुका हो कि सुनवाई समाप्त कर दी गई हो परंतु अभी आज्ञप्ति (डिग्री) नहीं लिखी गई है और इस अवस्था में वह मामला उसके समक्ष लम्बित पड़ा हो। यह अनुभव किया गया कि न-निपटाए गए मामलों अथवा अंशत: सुनवाई किए गए मामलों को उच्चतम न्यायालय को भेजने के उपबंध करने के बजाए जिससे कि वादियों को काफी कठिनाई पैदा होगी, यह वांछनीय है कि हम अपने सामान्य नियम में यह अपवाद करें कि प्रिवी कौंसिल का क्षेत्राधिकार उस तारीख को समाप्त हो जायेगा जिसको कि संविधान अस्तित्व में आ जायेगा। संशोधन संख्या 6 का मुख्य प्रयोजन यही है।

जहां तक संशोधन संख्या 7 का संबंध है, यह सुविदित है कि कुछ देशी रियायतों में प्रिवी कौंसिलें हैं जो कि अपने उच्च न्यायालयों के निर्णयों का अधीक्षण करती है जिसका कारण यह है कि वे प्रिवी कौंसिल अथवा यह कहना ठीक रहेगा कि इंग्लैण्ड की हिज मैजेसिटी के प्रिवी कौंसिल के क्षेत्राधिकार को मान्यता नहीं देती थीं। इसलिए उनकी अपनी प्रिवी कौंसिलें थीं। अब यह अनुभव किया गया है कि संविधान में इस उपबंध को दृष्टिगत रखते हुए उच्चतम न्यायालय तथा भिन्न-भिन्न राज्यों के अर्थात् भाग 3 तथा भाग 1 दोनों वर्ग के राज्यों के उच्च न्यायालयों के बीच सीधा संबंध हो, भाग 3 में देशी रियासत के प्रिवी कौंसिल के इस मध्यवर्ती संस्थान को कानूनी रूप से समाप्त कर दिया जाए, ताकि 26 जनवरी को भाग 3 के राज्य में उच्च न्यायालय से किसी राज्य में सभी अपीलें उच्चतम न्यायालय द्वारा निपटाए जाने के लिए स्वत: अंतरित हो जाएं।

मुझे बताया गया है कि भिन्न-भिन्न राज्यों में इन प्रिवी कौंसिलों को भिन्न-भिन्न नामों से पुकारा जाता है। यदि ऐसा है तो प्रारूप समिति का यह विचार है कि अपने अनुच्छेद 306 में प्रिवी कौंसिल की परिभाषा समाविष्ट करके और उसमें इन संस्थानों के भिन्न-भिन्न नामों तथा भिन्नताओं को शामिल करके इस कठिनाई को दूर किया जाये।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 138 तथा 139—श्री नज़ीरुद्दीन अहमद।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** अध्यक्ष महोदय, मैं संख्या 138 प्रस्तुत नहीं करना चाहता क्योंकि इसका अर्थ इस खंड का विरोध करना है। जहां तक संख्या 139 के संबंध में यह शाब्दिक स्वरूप का है तथा मैं इसे प्रारूप समिति के विवेक पर छोड़ता हूं।

जहां तक खंड (3) का संबंध है, जो कि सपरिषद् हिज मैजेस्टी को 26 जनवरी—वह तारीख जिस दिन कि संविधान प्रवर्तन में आएगा—के पश्चात् भी अपीलों तथा याचिकाओं को निपटाने की शक्ति देता है, यह खंड कुछ चौंका देने वाला प्रतीत होता है। अभी कुछ दिन पूर्व ही हमने इस सभा में एक अधिनियम पास किया जिसके अंतर्गत उन सभी अपीलों तथा याचिकाओं को जो कि न्यायिक समिति के समक्ष लम्बित हैं, फेडरल कोर्ट को भेज दिया गया है। तथापि, इसके कुछ अपवाद भी थे। एक अपवाद था अनुमति के लिए याचिका। यह उपबंध किया गया कि यदि न्यायालय में अवकाश की अवधि के दौरान, जो कि आज से आरंभ होती है, प्रिवी कौंसिल में अनुमति के लिए कोई याचिका लम्बित हो तो वह केवल अनुमति दे सकती है अथवा इससे इंकार कर सकती है। अत: इसका प्रभाव यह रहा कि यदि प्रिवी कौंसिल ने कोई अनुमति नहीं दी तो मामला अंतिम रूप से समाप्त माना गया। परंतु यदि कोई अनुमति दे दी जाती तो प्रिवी कौंसिल को उस पर आगे सुनवाई करने का अधिकार नहीं था। आगे सुनवाई फेडरल कोर्ट में तथा फेडरल कोर्ट को उच्चतम न्यायालय में बदल दिए जाने के पश्चात् बाद में उच्चतम न्यायालय में होगी और फिर कुछ अन्य मामले भी हैं जिन पर कि प्रिवी कौंसिल विचार कर सकती है, अर्थात् वे अपीलें जिन पर कि सुनवाई हो चुकी है, जिनमें कि न्यायिक समिति अपना निर्णय घोषित कर चुकी है परंतु हिज मैजेस्टी द्वारा उसकी अंतिम स्वीकृति से अभी अवगत नहीं कराया गया है। उन मामलों में हिज मैजेस्टी उस तारीख के पश्चात् भी प्रिवी कौंसिल की सिफारिशें स्वीकार करने की अधिकारी होगी।

जिस समय इस अधिनियम पर सदन में विचार हो रहा था उस समय हमें यह बताया गया था कि ऐसी कोई भी अपील नहीं है जो कि भारत से प्रिवी कौंसिल के पास लम्बित हो। लम्बित मामले केवल अनुमति के लिए याचिकाएं होंगी और यदि ये याचिकाएं स्वीकार की जाती हैं तो निस्संदेह मामले पर आगे सुनवाई भारत में होगी। लम्बित पड़ी एक मात्र याचिका का संबंध गोडसे की अपीलों से है। अन्य कोई याचिका लम्बित नहीं है। जहां तक अपीलों का संबंध है, कुछ भी लम्बित नहीं होगा, सिवाए न्यायिक समिति की सिफारिशें स्वयं हिज मैजेस्टी द्वारा स्वीकार किए जाने के। परंतु हिज मैजेस्टी द्वारा यह स्वीकृति स्वत: ही मिल जाती है और इसमें कभी भी विलम्ब नहीं होता। अत: खंड (3) की कोई आवश्यकता नहीं है जिसे कि अनावश्यक ही व्यापक रूप में व्यक्त किया गया है। इस सदन ने बार-बार कहा है कि अब से आगे सभी अपीलों की सुनवाई फेडरल न्यायालय द्वारा की जानी चाहिए, परन्तु यह पुराना विचार किसी न किसी रूप में अभी भी जारी है, तथा खंड (3) उस पुराने विचार को चिरस्थायी बनाता है जिसका कि यह सदन निश्चय ही परित्याग कर चुका है। तर्कों के दौरान डॉ. अम्बेडकर ने हाल ही में पास किए गए अधिनियम की धारा 4 का उल्लेख किया था। हाल ही में पास किए गए अधिनियम की धारा 4 में यह कहा गया है।

"धारा 2 की कोई बात सपरिषद् हिज मैजेस्टी के क्षेत्राधिकार को निम्नलिखित का निपटान करने से प्रभावित नहीं करेगी–

(क) कोई भी भारतीय अपील या याचिका जिस पर कि प्रिवी कौंसिल की न्यायिक समिति ने निर्धारित दिन से पूर्व निर्णय दिया हो, अथवा जैसी भी स्थिति हो, हिज मैजेस्टी को रिपोर्ट किया हो परंतु जिसे कि सपरिषद् हिज मैजेस्टी के आदेश द्वारा अवधारित नहीं किया गया है,"

निर्धारित दिन आज का दिन है, अर्थात् 10 अक्तूबर। यदि आज से पूर्व अर्थात् कल तक कोई निर्णय दिया गया है परंतु हिज मैजेस्टी ने उस पर अपनी अनुमति नहीं दी है, तो अनुमति दी जा सकती है। फिर हम खंड (ख) पर आते हैं:

"कोई भारतीय अपील या याचिका जिस पर कि न्यायिक समिति ने, अपील पर सुनवाई करने के पश्चात् निर्णय या आदेश आरक्षित रखा है"

और (ग)–

"कोई भारतीय अपील जिसे कि निर्धारित दिन से पूर्व वर्ष 1949 की न्यायालय-अवकाश की बैठकों के लिए न्यायिक समिति की कार्यसूची में दर्ज किया गया है और जिसके कि इस दिन के पश्चात् न्यायिक समिति के आदेश द्वारा या प्राधिकार के अंतर्गत वहां से हटाए जाने का कोई निदेश नहीं है।"

अत: यदि, वर्तमान अवधि के लिए प्रिवी कौंसिल के समक्ष आज कोई अपील लम्बित है तो इसे निपटाया जाएगा, जब तक कि इस पर भारत में सुनवाई किए जाने का निदेश नहीं दिया जाता, परंतु हमारे द्वारा पास किए गए अधिनियम के आधार पर प्रिवी कौंसिल इन अपीलों को भारत को भेजने के निर्देश देने के लिए बाध्य होगी। परंतु यह भी सुविदित है कि गोडसे के मामले के सिवाय कोई भी अन्य भारतीय मामला सूची में दर्ज नहीं किया गया है। फिर हम खंड (घ) आते हैं:

"कोई भारतीय याचिका जो कि निर्धारित दिन से पूर्व प्रिवी कौंसिल की रजिस्ट्री में दाखिल की गई है।"

अर्थात् अनुमति तथा अन्य बातों के लिए याचिका पर भी केवल सुनवाई होगी तथा विशेष अनुमति दी जा सकती है अथवा इससे इंकार किया जा सकता है। यदि इंकार कर दिया जाता है तो मामला यहीं समाप्त हो जाता है और यदि अनुमति दी जाती है तो भी मामला समाप्त हो जाता है क्योंकि मामला भारत को वापस आ जाता है।

अत: मेरा निवेदन है कि खंड (3) अनावश्यक रूप से व्यापक रखा गया है और इसमें काल्पनिक मामले शामिल हैं जो कि विद्यमान नहीं हैं। हमें इस बात की सही जानकारी होनी चाहिए कि प्रिवी कौंसिल में कौन-कौन से मामले लम्बित हैं, कितने हैं, कितने मामले निर्धारित दिन 10 अक्तूबर अर्थात्, आज के पश्चात् स्वत: अंतरित हो जाएंगे और क्या कोई मामला शेष रह जाएगा। हमें यह बात स्पष्टतया विदित होनी चाहिए कि उनके समक्ष संभवतया कौन-कौन से मामले लम्बित पड़े होंगे और जिन्हें कि 26 जनवरी 1950, जो कि इस संविधान के प्रवर्तन में आने की अस्थायी तारीख है, के पश्चात् भी धारा (3) के अंतर्गत निपटाया जा सकेगा। हमारे समक्ष विद्यमान परिस्थितियों का यही चित्र होना चाहिए, विपरीत इसके कि हम एक व्यापक धारा पास करें जिसमें कि सभी प्रकार के काल्पनिक और आनुमानिक मामले आते हों, मेरे विचार में 26 जनवरी को भारत की पूर्णरूपेण

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

स्वतंत्रता के पश्चात् आज तक हमारे द्वारा अपनाए गए संविधान को दृष्टिगत रखते हुए तथा हमारे द्वारा डोमिनियन दर्जे का परित्याग गिए जाने तथा स्वाधीन दर्जा अर्जित करने को दृष्टिगत रखते हुए इन शक्तियों का न्यायिक समिति में जारी रहना कुछ-कुछ असाधारण होगा। महोदय, इन परिस्थितियों में मेरा निवेदन है कि खंड (3) का लोप किया जाना चाहिए तथा इसे स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए। इस मामले का स्पष्टतया विश्लेषण किया जाना चाहिए और सभा को बताया जाना चाहिए कि कौन-कौन से मामले हैं जो कि वास्तव में खंड (3) की परिधि में आते हैं। अतः जब तक कि इस मामले को स्पष्ट नहीं किया जाता, मैं इस खंड का विरोध करता हूं।

***अध्यक्षः** डॉ. देशमुख।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** महोदय, मैं अपना संशोधन प्रस्तुत नहीं कर रहा हूं।

***अध्यक्षः** श्री शिब्बन लाल सक्सेना का संशोधन इसका लोप करने के लिए है। अन्य संशोधन प्रस्तुत हो चुकने के पश्चात् आप इस पर बोल सकते हैं— श्री महावीर त्यागी।

***श्री महावीर त्यागीः** महोदय, मैं अपना संशोधन प्रस्तुत नहीं कर रहा हूं।

***अध्यक्षः** श्री शिब्बन लाल सक्सेना, आप इस पर बोल सकते हैं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं।

"That in amendments Nos. 6 and 7 of List I (Second Week), the proposed clause (3) be deleted, and the proposed new clause 3(a) be re-numbered as (3)"

["कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 6 तथा 7 में, प्रस्तावित खंड (3) निकाल दिया जाये तथा प्रस्तावित नये खंड (3क) को खंड (3) के रूप में पुनर्संख्याकित किया जाए।"]

***अध्यक्षः** इसको प्रस्तुत करना आवश्यक नहीं है। आप इस पर बोल सकते हैं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** यह संशोधन केवल एक खंड के लोप के लिए है, अनुच्छेद के लोप के लिए नहीं। महोदय, इस खंड (3) पर मेरी आपत्ति यह है कि मैं नहीं चाहता कि 26 जनवरी के पश्चात् सपरिषद् सम्राट का इस देश से कोई सरोकार रहे। उस दिन हम एक पूर्णरूपेण स्वतंत्र गणराज्य बन जाएंगे तथा इस अनुच्छेद का वह उपबंध, जिसमें कि यह परिकल्पना की गई है उस दिन लम्बित पड़ी अपीलों की सुनवाई करने के लिए सपरिषद् सम्राट को अधिकार होगा, मेरे विचार से हमारी स्वाधीनता के लिए अपमानजनक होगा। यह आपत्ति की जा सकती है कि कुछ अपीलें लम्बित पड़ी हुई हो सकती हैं तथा यह कि सम्बन्धित वादियों को कठिनाई होगी, परंतु मैं इस सदन का ध्यान संविधान के प्रारूप के पृष्ठ 153 की पादटिप्पणी की ओर दिलाता हूं। वास्तव में प्रारूप समिति में अनुच्छेद 308 के खंड (3) में मूलतः स्वयं यह परिकल्पना की थी कि अंतःपरिषद् (प्रिवी कौंसिल) का अधिकार क्षेत्र उस दिन समाप्त हो जाएगा।

"इस संविधान के प्रारंभ होने के दिन तथा उसके बाद से सपरिषद् सम्राट का भारत के राज्य क्षेत्र के भीतर किसी न्यायालय की किसी आज्ञप्ति या आदेश से उत्पन्न या उससे सम्बन्धित अपीलें तथा याचिकाएं ग्रहण करने तथा निपटाने का क्षेत्राधिकार, जिसमें कि दाण्डिक मामलों से सम्बन्धित वह क्षेत्राधिकार भी शामिल है जिसमें कि सम्राट को उस विशेषाधिकार के अधिकार के आधार पर कार्यवाही करनी होती है जो कि सम्राट को प्राप्त है, समाप्त हो जाएगा तथा उक्त तारीख को सपरिषद् सम्राट के समक्ष लम्बित सभी अपीलें तथा अन्य कार्यवाहियां उच्चतम न्यायालय को अंतरित की जाएंगी तथा उच्चतम न्यायालय द्वारा उन्हें निपटाया जाएगा।"

अत: मूल अनुच्छेद में उन्होंने स्वयं परिकल्पना की थी कि अंत:परिषद् (प्रिवी कौंसिल) का क्षेत्राधिकार उस तारीख को समाप्त हो जाएगा जिस तारीख को कि यह संविधान प्रवर्तन में आएगा। पादटिप्पणी में कहा है:

"समिति का विचार है कि सपरिषद् सम्राट के समक्ष लम्बित सभी अपीलें तथा अन्य कार्यवाहियां उस समय तक अंतिम रूप में निपटा दी जाएंगी जब यह संविधान प्रवर्तन में आएगा। तथापि, यदि संविधान के प्रारूप के समय कुछ अपीलें तथा अन्य कार्यवाहियां सपरिषद् सम्राट के समक्ष लम्बित पड़ी रहती हैं तथा उनको उच्चतम न्यायालय में अंतरित करने तथा उसके द्वारा निपटाए जाने के बारे में यदि कोई कठिनाई पैदा होती है, तो राष्ट्रपति "कठिनाइयों का दूर करना" (अनुच्छेद 313) के अंतर्गत आवश्यक आदेश जारी कर सकते हैं।"

यही कुछ है जो कि प्रारूप समिति ने मूल अनुच्छेद 308 की पादटिप्पणी में कहा है। इस दृष्टिकोण से मैं यह नहीं मानता कि जबकि हमने अनुच्छेद 313 पास कर दिया है, इस नए खंड (3) की कोई आवश्यकता है जिसमें कि यह परिकल्पना की गई है कि प्रिवी कौंसिल का क्षेत्राधिकार 26 जनवरी के पश्चात भी जारी रह सकेगा जिस समय कि हम एक मुक्त तथा स्वाधीन देश होंगे। मेरे विचार में, पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त कर लेने के पश्चात् भी प्रिवी कौंसिल के हस्तक्षेप का प्रावधान करके हमें संविधान को कुरूपित नहीं करना चाहिए। मेरे विचार में यहां कुछ गलती हुई क्योंकि अनुच्छेद 313 काफी पर्याप्त है तथा अनुच्छेद 308 में इस खंड (3) की कोई आवश्यकता नहीं है। हमारे संविधान को इस खंड द्वारा कुरुपित नहीं किया जाना चाहिए।

***अध्यक्ष:** डॉ. अम्बेडकर, क्या आप कुछ कहना चाहेंगे?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** महोदय, मैं नहीं समझता कि जो संशोधन प्रस्तुत किए गए हैं उनके पक्ष में कही गई कोई बात किसी प्रकार का कोई महत्वपूर्ण मुद्दा उठाती है। यह भावनाओं का मामला अधिक है और मेरा विचार है कि सुविधा की दृष्टि से यह बेहतर है कि हम इस खंड को रखें और ऐसा करने में किसी तरह से अपमानित अनुभव नहीं करें क्योंकि यदि प्रिवी कौंसिल, खंड (3) में उल्लिखित सीमित शर्तों के भीतर, क्षेत्राधिकार का निर्वहन करना जारी भी रखती है तो यह नहीं भूलना चाहिए—और मेरे विचार में जिन मेरे मित्रों ने संशोधन प्रस्तुत किए हैं, वे यह तथ्य भुला चुके प्रतीत होते हैं—कि वह क्षेत्राधिकार प्रिवी कौंसिल का अंतर्निहित क्षेत्राधिकार नहीं है वरन् एक ऐसा क्षेत्राधिकार है जो कि इस सभा

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

ने उन्हें प्रदत्त किया है। वास्तव में प्रिवी कौंसिल कुछ आवश्यक तथा महत्वपूर्ण कार्य करने के लिए इस सभा के एजेंट के रूप में कार्य करेगी। अतः मेरे विचार में अपमानित महसूस करने का अथवा यह समझने कि हम वास्तव में अपनी स्वतंत्रता का सौदा कर रहे हैं, का कोई कारण नहीं है।

जहां तक मेरे मित्र प्रो. सक्सेना द्वारा उठाए गए प्रश्न का सबंध है जिसमें कि उन्होंने अनुच्छेद 308 की पादटिप्पणी का उल्लेख किया था, मैं यह निर्बाध रूप से स्वीकार करता हूं कि बेहतर विचार के पश्चात् प्रारूप समिति ने यह पाया कि हो सकता है कि कठिनाइयां दूर करने संबंधी खंड का इस प्रयोजन के लिए उचित प्रकार से उपयोग नहीं किया जाये। सभी प्रकार के संदेह को दूर करने के लिए हमने सोचा कि स्वयं संविधान द्वारा क्षेत्राधिकार प्रदत्त करने के लिये इस प्रकार का यह अलग खंड रखना अधिक अच्छा होगा।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधन मतदान के लिए रखूंगा। केवल एक ही संशोधन है, संख्या 177 जो कि प्रो. शिब्बन लाल द्वारा प्रस्तुत किया गया है।

प्रश्न यह है:

"That in amendment Nos. 6 and 7 of List I (Second Week) the proposed clause (3) be deleted and the proposed new clause (3a) be renumbered as (3)."

["कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 6 तथा 7 में, प्रस्तावित खंड (3) निकाल दिया जाए तथा प्रस्तावित नए खंड (3क) को खंड (3) के रूप में पुनसंख्यांकित किया जाए।"]

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***अध्यक्षः** अब मैं डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत संशोधन को मतदान के लिए रखता हूं।

प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 308 के खंड (3) के स्थान पर यह रखा जाए–

'(3) Nothing in this Constitution shall operate to invalidate the exercise of jurisdiction by His Majesty in Council to dispose of appeals and petitions from or in respect of any judgement, decree or order of any court within the territory of India in so far as the exercise of such jurisdiction is authorised by law, and any order of His Majesty in Council made on any such appeal or petition after the commencement of this Constitution shall for all purposes have effect as if it were an order or decree made by the Supreme Court in the exercise of the jurisdiction conferred on such court by this Constitution.'

['(3) इस अधिनियम की कोई बात भारत राज्य क्षेत्र में के किसी न्यायालय के किसी निर्णय, आज्ञप्ति या आदेश की, या के विषय में अपीलों

और याचिकाओं को निपटाने के लिए सपरिषद् सम्राट के क्षेत्राधिकार के प्रयोग को वहां तक अमान्य न करेगी जहां तक कि ऐसे क्षेत्राधिकार का प्रयोग विधि द्वारा प्राधिकृत है तथा ऐसी किसी अपील या याचिका पर इस संविधान के प्रारंभ के पश्चात् दिया गया सपरिषद् सम्राट का कोई आदेश सब प्रयोजनों के लिए ऐसे प्रभावी होगा मानों कि वह उच्चतम न्यायालय द्वारा उस क्षेत्राधिकार के प्रयोग में, जो ऐसे न्यायालय को इस संविधान द्वारा दिया गया है, दिया गया कोई आदेश या आज्ञप्ति हो।']

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधन संख्या 7 मतदान के लिए रखता हूं। प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 308 के खंड (3) के पश्चात् यह नया खंड अंत:स्थापित किया जाए:–

'(3a) On and from the date of commencement of this Constitution the jurisdiction of the authority functioning as the Privy Council in a State for the time being specified in Part III of the First Schedule to entertain and dispose of appeals and petitions from or in respect of any judgement, decree or order of any court within that State shall cease and all appeals and other proceedings pending before the said authority on the said date shall be transferred to, and disposed of by the Supreme Court."

'(3) इस संविधान के प्रारंभ की तारीख पर और से प्रथम अनुसूची के भाग 3 में उल्लिखित किसी राज्य में अंत: परिषद् के रूप में फिलहाल कृत्यकारी प्राधिकारी का इस राज्य में के किसी न्यायालय के किसी निर्णय, आज्ञप्ति या आदेश की अपील या याचिका को ग्रहण करने या निपटाने का क्षेत्राधिकार समाप्त हो जाएगा तथा ऐसे प्राधिकारी के समक्ष उक्त तारीख को लंबित सब अपीलें और अन्य कार्यवाहियां उच्चतम न्यायालय को भेज दी जाएंगी और उसके द्वारा निबटाई जाएंगी।' "]

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है।

"कि अनुच्छेद 308, संशोधित रूप में संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 308 संशोधित रूप में, संविधान में जोड़ दिया गया।"

अनुच्छेद 310

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 310 के स्थान पर यह रखा जाए:

'310.(1) Notwithstanding anything contained in clause (2) of article 193

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

of this Constitution, the judges of a High Court in any Province holding office immediately before the date of commencement of this Constitution shall, unless they have elected otherwise, become on that date the judges of the High Court in the corresponding State, and shall thereupon be entitled to such salaries and allowances and to such rights in respect of leave and pensions as are provided for under article 197 of this Constitution in respect of the judges of such High Court.

(2) The judges of a High Court in any Indian State corresponding to any State for the time being specified in Part III of the First Schedule holding office immediately before the date of commencement of this Constitution shall, unless they have elected otherwise, become on that date the judges of the High Court in the State so specified and shall, notwithstanding anything contained in clauses (1) and (2) of article 193 of this Constitution but subject to the proviso to clause (1) of that article, continue to hold office until the expiration of such period as the President may by order determine.

(3) In this article the expression 'judge' does not include an acting judge or an additional judge.' "

["310 (1) इस संविधान के अनुच्छेद 193 के खंड (2) में किसी बात के होते हुए, इस संविधान के प्रारंभ की तारीख से ठीक पहले किसी प्रांत में के उच्च न्यायालय के पदस्थ न्यायाधीश, यदि वे अन्यथा पसंद न कर चुके हों, ऐसी तारीख को तत्स्थानी राज्य के उच्च न्यायालय के न्यायाधीश हो जाएंगे तथा तत्पश्चात ऐसे वेतनों और भत्तों तथा छुट्टी और निवृति-वेतन के विषय में ऐसे अधिकारों का हक रखेंगे जैसे कि ऐसे उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के बारे में इस संविधान के अनुच्छेद 197 के अधीन उपबंधित है।

(2) इस संविधान के प्रारंभ की तारीख से ठीक पहले प्रथम अनुसूची के भाग 3 में फिलहाल उल्लिखित किसी राज्य के तत्स्थानी किसी देशी राज्य में के उच्च न्यायालय के पदस्थ न्यायाधीश, यदि वे अन्यथा पसंद न कर चुके हों, ऐसी तारीख को वैसे उल्लिखित राज्य में के उच्च न्यायालय के न्यायाधीश हो जाएंगे तथा इस संविधान के अनुच्छेद 193 के खंड (1) और (2) में किसी बात के होते हुए भी, किंतु उस अनुच्छेद के खंड (1) के परंतुक के अधीन रहते हुए, ऐसी कालावधि तक पदस्थ बने रहेंगे जैसी कि राष्ट्रपति आदेश द्वारा निर्धारित करे।

(3) इस अनुच्छेद में "न्यायाधीश" पद के अंतर्गत कार्यकारी न्यायाधीश या अपर न्यायाधीश नहीं है।' "]

यह अनुच्छेद केवल इस प्रकार का अनुच्छेद है जिसे कि हम "आगे बढ़ाने वाला" अनुच्छेद की संज्ञा दिया करते थे, केवल उच्च न्यायालयों में नए पदों पर न्यायाधीशों को ले जाने वाला, यदि वे नियुक्त होना पसंद करते हैं।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 88

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मैं 88 प्रस्तुत नहीं कर रहा हूं। मैं 141 प्रस्तुत करूंगा।

***श्री आर.के. सिधवा:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि उपरोक्त संशोधन 87 में, प्रस्तावित अनुच्छेद के खंड (1) में, शब्द तथा संख्या 'Article 197 (अनुच्छेद 197)' **के पश्चात्** 'and second schedule (और द्वितीय अनुसूची)' **शब्द अन्त:स्थापित किए जाएं।**"

मेरा संशोधन शाब्दिक मात्र है। इसे प्रस्तुत करने में मेरा उद्देश्य इस प्रकार है। उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन के संबंध में अनुच्छेद 197 का उल्लेख किया गया है। उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन के बारे में द्वितीय अनुसूची में भी कहा गया है तथा मैंने इसका उल्लेख अनुच्छेद 197 के साथ-साथ करना ठीक समझा। अनुसूची संविधान का एक महत्वपूर्ण भाग है विशेषकर इस अनुच्छेद के संदर्भ में जिसमें कि वेतन, भत्तों तथा पेंशन से संबंधित अन्य विषयों का उल्लेख किया जाएगा। अत: इसे अत्यन्त स्पष्ट बनाने के लिए मैंने प्रस्ताव रखा है कि "अनुच्छेद 197" के पश्चात् "तथा द्वितीय अनुसूची" शब्द अंत:स्थापित किए जाएं।"

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 8 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 310 के खंड (1) में 'as are provided under article 197 of this Constitution in respect of the Judges of such High Court' (जैसे कि ऐसे उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के बारे में इस संविधान के अनुच्छेद 197 के अधीन उपबंधित है) **शब्दों के स्थान पर** 'as they were entitled to immediately before the said commencement (जिसके कि वे उक्त प्रारंभ के तुरंत पूर्व हकदार थे)' **शब्द रखे जाएं।**" इस अनुच्छेद के खंड (1) में उपबंध है कि किसी उच्च न्यायालय के न्यायाधीश उस तारीख को जिसको कि यह संविधान प्रवर्तन में आता है अंतरिम रूप में 26 जनवरी, 1950 को उसी उच्च न्यायालय के न्यायाधीश बने रहेंगे।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** क्या मैं इस बात की ओर ध्यान दिला सकता हूं कि यह संशोधन द्वितीय अनुसूची का पूर्वानुमान कर रहा है? इस मामले पर द्वितीय अनुसूची के अंतर्गत कार्यवाही की जानी है तथा उचित समय तो वही होगा जब यह अनुसूची सभा के समक्ष होगी।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** मैंने उस पर भी सावधानी पूर्वक विचार किया है, परंतु मामला पूरी तरह से उसके अंतर्गत नहीं आएगा। उसमें इस संविधान के प्रारंभ के पश्चात् न्यायाधीशों के वेतनमानों का उपबंध किया जाएगा, परंतु यहां मामला बिल्कुल भिन्न है। मेरे संशोधन में कहा गया है कि जो वेतन वे संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले अर्थात् 25 जनवरी, 1950 को ले रहे थे, 26 जनवरी से भी वे वही वेतन प्राप्त करेंगे तथा उन्हीं शर्तों के हकदार रहेंगे। अनुसूची में नए वेतनमान दिए गए हैं। वह एक बिल्कुल भिन्न बात है।

मेरा निवेदन है कि खंड (1) की कोई आवश्यकता नहीं है। जहां तक मैं समझ सकता हूं, इस खंड की आवश्यकता केवल वर्तमान न्यायाधीशों के वेतन में अप्रत्यक्ष रूप से कटौती को उचित ठहराने के लिए है। वास्तव में यह स्पष्ट है कि 26 जनवरी को अनुच्छेद 310 के इस खंड (1) के अलावा

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

भी, वे न्यायाधीश उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश बने रहेंगे क्योंकि वही उच्च न्यायालय बना रहेगा। हमने अन्य सरकारी सेवकों के मामले में इस प्रकार की निरंतरता का उपबंध नहीं किया है। प्रत्येक व्यक्ति जो कि 25 जनवरी को सरकारी सेवक है निश्चय ही 26 जनवरी को भी उसी रूप में सेवक बना रहेगा, जब तक कि उसे इस बीच बर्खास्त नहीं कर दिया गया हो या उसने त्यागपत्र न दे दिया हो या उसे सेवामुक्त न कर दिया गया हो अथवा उसकी मृत्यु न हो गई हो। उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में 25 जनवरी से 26 जनवरी तक उसकी सेवा स्वत: जारी रहेगी तथा इसके लिए किसी प्राधिकार की आवश्यकता नहीं है जैसा कि खंड (1) के अंतर्गत प्रावधान किए जाने का प्रयास किया गया है। मेरा निवेदन है कि इस दृष्टि से खंड (1) अत्यंत अनावश्यक है। परंतु यह एक अन्य विचार भी उत्पन्न करता है, अर्थात् यह वर्तमान न्यायाधीशों के वेतन को कम करने का अप्रत्यक्ष प्रयास है। वास्तव में जहां तक वर्तमान न्यायाधीशों का संबंध है, विद्यमान शर्तों के अधीन उनके नियत वेतन हैं। यदि यह खंड न भी हो तो भी वे 26 जनवरी को तथा इससे पश्चात् वही वेतन प्राप्त करते रहते इस खंड का वास्तविक प्रयोजन वर्तमान न्यायाधीशों के वेतन को कम करना है। मेरा निवेदन है कि उनका वेतन कम नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि वे एक संविदा पर जिसके अंतर्गत कि वे नियुक्त हुए थे, एक विशेष वेतन पा रहे हैं। उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश निहायत योग्य वकीलों में से नियुक्त किए जाते हैं जिनके बारे में कि यह मानना होगा कि वे बहुत अच्छी आय अर्जित कर रहे थे। उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति के संबंध में केवल दो ही शर्तें थीं, अर्थात् उन्हें साठ वर्ष की आयु होने तक सामान्य रूप में बने रहना था और दूसरे इसके पश्चात् उन्हें उन उच्च न्यायालयों में जिनके कि वे न्यायाधीश रह चुके हों तथा उनके अधीनस्थ न्यायालयों में अपना कानूनी व्यवसाय करने की अनुमति नहीं दी जानी थी। परन्तु अब हम ऐसी शर्तें अधिनियमित कर रहे हैं कि उनके वेतन कम कर दिये जाएंगे और इसके अलावा यह भी कि साठ वर्ष की आयु पूरी हो जाने पर उच्च न्यायालय के सभी न्यायाधीशों पर न केवल उस उच्च न्यायालय में जिसमें कि वे नियुक्त हैं, अथवा इसके अधीनस्थ न्यायालयों में बल्कि सभी न्यायालयों, जो कि उस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र तक में नहीं आते, अर्थात् अन्य राज्यों के उच्च न्यायालयों तथा उच्चतम न्यायालय में भी, कानूनी व्यवसाय चलाने पर रोक होगी। इससे उनके साथ किया गया करार दो पहलुओं से भंग होगा।

***डॉ. बख्शी टेक चन्द:** (पूर्वी पंजाब-जनरल): क्या मैं एक सुझाव दे सकता हूं? क्या यह उचित नहीं रहेगा कि इस विषय पर उस समय विचार किया जाए जब कि द्वितीय अनुसूची विचाराधीन होगी? द्वितीय अनुसूची के लिए संशोधन संख्या (11) (जो कि डॉ. अम्बेडकर के नाम में है) में उन न्यायाधीशों के वेतनों का मामला समाविष्ट है जो कि 31 अक्टूबर 1948 को या उससे पूर्व नियुक्त किए गए थे। इस विषय को थोड़ा-थोड़ा लेने के बजाय क्या इस संशोधन पर उस समय चर्चा करना आपके लिए सुविधाजनक नहीं रहेगा जब हम द्वितीय अनुसूची को विचार के लिये लेंगे? जैसा कि संशोधन संख्या 11 से पता चलता है, इसका संबंध केवल उन न्यायाधीशों के वेतन से नहीं है जिन्हें कि नए संविधान के अंतर्गत नियुक्त किया जाएगा, बल्कि इसमें उन न्यायाधीशों के वेतनों का भी उल्लेख है जिनकी नियुक्ति उस तारीख से पूर्व हुई थी और जो इस संविधान के प्रारंभ की तारीख को उच्च न्यायालयों में काम कर रहे होंगे। यदि श्री नज़ीरुद्दीन अहमद का यह संशोधन अस्वीकृत हो जाता है तो इससे उन संशोधनों पर प्रभाव पड़ सकता है जो कि अनुसूची के लिए हैं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** यदि इस संशोधन पर चतुर्थ अनुसूची के लिए संशोधनों के साथ-साथ विचार करने का प्रस्ताव है तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। परंतु यह मुद्दा उठाने का यही उचित समय है। जहां तक इस तर्क का प्रश्न है कि यदि यह संशोधन अस्वीकृत हो जाता है तो अन्य संशोधन भी अस्वीकृत माने जाएंगे, मैं इससे सहमत नहीं हूं। यह संशोधन, इस तथ्य के बावजूद कि न्यायाधीशों की नियुक्ति एक निश्चित तारीख से पूर्व हुई थी, वर्तमान न्यायाधीशों के वेतन का संरक्षण करने के लिये हैं। परंतु इस संशोधन की अस्वीकृति का अर्थ यह नहीं है कि अन्य संशोधन अस्वीकृत हो जाएंगे। जहां तक डॉ. बख्शी टेक चंद के इस सुझाव का संबंध है कि मुझे इसे संशोधन संख्या 11 के संशोधन के रूप में प्रस्तुत करना चाहिए मैं इस विषय में आपके अनुदेशों की प्रतीक्षा करूंगा।

***अध्यक्षः** मेरे विचार में, इस खंड के इसी रूप में पास किए जाने से अनुसूची पर किसी प्रकार का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। मैं अनुसूची के मार्ग में बाधा नहीं बनूंगा। किसी भी स्थिति में मैं उसे उस आधार पर असंगत घोषित नहीं करूंगा।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** वह संशोधन यह है कि उन न्यायाधीशों के जो कि एक निश्चित तारीख से पूर्व नियुक्त किए गए थे, वेतन का संरक्षण किया जायेगा। परंतु मेरा प्रश्न यह है कि न्यायाधीशों के वेतन जैसे कि वे 25 जनवरी, 1950 को थे, संरक्षित किये जाने चाहिए। इसमें तथा डॉ. अम्बेडकर के उस संशोधन में हल्का सा अंतर है। मेरा निवेदन है कि डॉ. अम्बेडकर का संशोधन मेरे संशोधन के परिचालित किए जाने के पश्चात् भेजा गया है। यह वास्तव में स्थिति में कुछ सीमा तक सुधार करने का प्रयास है, परंतु वह स्थिति में उस सीमा तक इतना सुधार करने के का प्रयास नहीं करता जितना कि मैं चाहता हूं कि वह करता। महोदय, मैं निश्चय ही आपके विनिर्णय का पालन करूंगा।

***अध्यक्षः** यदि आप चाहें तो जो मुद्दा आपने उठाया है उसे समाविष्ट करते हुए आप एक दूसरे संशोधन की सूचना दे सकते हैं। क्या कोई सदस्य इसके संबंध में कुछ कहना चाहता है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** इसमें सिद्धांत का कोई प्रश्न नहीं है।

***अध्यक्षः** डॉ. सिधवा द्वारा प्रस्तुत एक संशोधन है, और वह भी शाब्दिक स्वरूप का है। तथा मैं इसे मतदान के लिए रखूं?

***श्री आर.के. सिधवाः** मैं इसे प्रारूप समिति पर छोड़ता हूं।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 310 के स्थान पर यह रखा जाए।

Provisions as to Judges of High Courts

310 (1) Notwithstanding anything contained in clause (2) of article 193 of this Constitution the judges of a High Court in any Province holding office immediately before the date of commencement of this Constitution shall unless they have elected otherwise, become on that date the judges of the High Court in the corresponding State, and shall thereupon be entitled to such salaries and allowances and to such rights in respect of leave and pensions as are provided for under article 197 of this Constitution in repect of the judges of such High Court.

[अध्यक्ष]

(2) The judges of a High Court in any Indian State corresponding to any State for the time being specified in Part III of the First Schedule holding office immediately before the date of commencement of this Constitution shall, unless they have elected otherwise, become on that date the judges of the High Court in the State so specified and shall notwithstanding anything contained in clauses (1) and (2) of article 197 of this Constitution but subject to the proviso to clause (1) of that article, continue to hold office until the expiration of such period as the President may by order determine.

(3) In this article the expression 'Judge' does not include an acting judge or an additional judge.'

['310(1) इस संविधान के अनुच्छेद 193 के खंड (2) में किसी बात के होते हुए, इस संविधान के प्रारंभ की तारीख से ठीक पहले किसी प्रांत में के उच्च न्यायालय के पदस्थ न्यायाधीश, यदि वे अन्यथा पसंद न कर चुके हों, ऐसी तारीख को तत्स्थानी राज्य के उच्च न्यायालय के न्यायाधीश हो जाएंगे तथा तत्पश्चात् ऐसे वेतनों और भत्तों तथा छुट्टी और निवृत्ति वेतन के विषय में ऐसे अधिकारों का हक रखेंगे जैसे कि ऐसे उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के बारे में इस संविधान के अनुच्छेद 197 के अधीन उपबंधित है।

(2) इस संविधान के प्रारंभ की तारीख से ठीक पहले प्रथम अनुसूची के भाग 3 में फिलहाल उल्लिखित किसी राज्य के तत्स्थानी किसी देशी राज्य में के उच्च न्यायालय के पदस्थ न्यायाधीश, यदि वे अन्यथा पसंद न कर चुके हों, ऐसे तारीख को वैसे उल्लिखित राज्य में के उच्च न्यायालय के न्यायाधीश हो जाएंगे तथा इस संविधान के अनुच्छेद 193 के खंड (1) और खंड (2) में किसी बात के होते हुए भी, किंतु उस अनुच्छेद के खंड (1) के परंतुक के अधीन रहते हुए, ऐसी कालावधि तक पदस्थ बने रहेंगे जैसा कि राष्ट्रपति आदेश द्वारा निर्धारित करे।

(3) इस अनुच्छेद में 'न्यायाधीश' पद के अंतर्गत कार्यकारी न्यायाधीश या अपर न्यायाधीश नहीं है।' "]

संशोधन स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 310 संविधान में जोड़ दिया गया।

अनुच्छेद 311

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि अनुच्छेद 311 के स्थान पर यह अनुच्छेद रखा जाए:

Provisions as to provisional Parliament of the Union and the Speaker and Deputy Speaker thereof

311.(1) Until both Houses of Parliament have been duly constituted and summoned to meet for the first session under the provisions of this Constitution, the body functioning as the Constituent Assembly of the Dominion of India immediately before the commencement of this Constitution shall exercise all the powers and perform all the duties conferred by the provisions of this Constitution on Parliament.

Explanation—For the purposes of this clause, the Constituent Assembly of the Dominion of India includes—

(i) the members chosen to represent any State or other Territory for which representation is provided under clause (2) of this article, and

(ii) the members chosen to fill casual vacancies in the said Assembly.

(2) the President may by rules provide for—

(a) the representation in the provisional Parliament functioning under clause (1) of this article of any State or other Territory which was not represented in the Constituent Assembly of the Dominion of India immediately before the commencement of this Constitution.'

(b) the manner in which the representatives of such States or other Territories in the provisional Parliament shall be chosen, and

(c) the qualifications to be possessed by such representatives.

(3) If a member of the Constituent Assembly of the Dominion of India was on the sixth day of October, 1949, also a member of a House of the Legislature of a Governor's Province or an Indian State, then, as from the date of commencement of this Constitution that person's seat in the said Assembly shall, unless he has ceased to be a member thereof earlier, become vacant, and every such vacancy shall be deemed to be a casual vacancy.

(4) Any person holding office immediately before the commencement of this Constitution as Speaker or Deputy Speaker of the Constituent Assembly when functioning as the Dominion Legislature under the Government of India Act, 1935, shall continue to be the Speaker or, as the case may be, the Deputy Speaker of the provisional Parliament functioning under clause (1) of this article."

संघ की अन्तर्कालीन संसद तथा उसके अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष के बारे में उपबंध

'311. (1) जब तक कि इस संविधान के उपबंधों के अधीन संसद् के दोनों सदन सम्यक रूप से गठित न हो जायें तथा प्रथम सत्र में अधिवेशित होने के लिए आहूत न हो जायें तब तक वह निकाय, जो भारत डोमिनियम की संविधान सभा के रूप

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

में इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले कृत्यकारी था, इस संविधान के उपबंधों द्वारा संसद को दी गई सभी शक्तियों का प्रयोग तथा कर्तव्यों का पालन करेगा।

व्याख्या–इस खंड के प्रयोजनों के लिए भारतीय डोमिनियन की संविधान सभा के अंतर्गत–

(1) किसी राज्य अथवा अन्य राज्य-क्षेत्र का, जिसके प्रतिनिधित्व के लिये इस अनुच्छेद के खंड (2) के अधीन उपबन्ध है, प्रतिनिधित्व करने के लिए चुने गए सदस्य, तथा

(2) उपरोक्त सभा में आकस्मिक रिक्तता की पूर्ति के लिए चुने गए सदस्य भी होंगे।

(2) राष्ट्रपति नियमों द्वारा–

(क) इस अनुच्छेद के खंड (1) के अधीन कृत्यकारिणी अंतर्कालीन संसद में किसी ऐसे राज्य या अन्य राज्य-क्षेत्र के जिसका प्रतिनिधित्व इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले भारत डोमिनियन की संविधान सभा में न था, के प्रतिनिधित्व के लिए,

(ख) अंतर्कालीन संसद में ऐसे राज्यों या अन्य राज्य-क्षेत्रों के प्रतिनिधि जिस रीति से चुने जायेंगे उसके लिये, तथा

(ग) ऐसे प्रतिनिधियों की जो अर्हताएं चाहिये उनके लिये उपबंध कर सकेगा।

(3) यदि भारत डोमिनियन की संविधान सभा का कोई सदस्य अक्तूबर 1949 के छठे दिन किसी राज्यपाल-प्रांत अथवा किसी देशी राज्य के विधानमंडल के सदन का भी सदस्य था, तो इस संविधान के प्रारंभ की तारीख उपरोक्त सभा से लेकर उस व्यक्ति का स्थान, यदि उसका इस सभा का सदस्य होना इससे पहले ही समाप्त न हो गया हो, रिक्त हो जाएगा तथा प्रत्येक ऐसी रिक्तता आकस्मिक रिक्तता समझी जायेगी।

(4) कोई व्यक्ति, जो संविधान के प्रारंभ के ठीक पहले भारत शासन अधिनियम, 1935 के अधीन डोमिनियन विधानमंडल के रूप में कृत्यकारिणी संविधान सभा के अध्यक्ष या उपाध्यक्ष के रूप में पदस्थ था, इस अनुच्छेद के खंड (1) के अधीन कृत्यकारिणी अंतर्कालीन संसद का यथास्थिति अध्यक्ष या उपाध्यक्ष बना रहेगा।' "

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (3) के स्थान पर, यह रखा जाए:

(3) If a member of the Constituent Assembly of the Dominion of India was on the sixth day of October, 1949 or thereafter becomes at any time before the commencement of this Constitution a member of a House of the Legislature of a Governor's Province or an Indian State corresponding to any State for the time being

specified in Part III of the First Schedule or a Minister for any such State, then as from the date of commencement of this Constitution the seat of such member in the Constituent Assembly shall, unless he has ceased to be a member of that Assembly earlier, become vacant and every such vacany shall be deemed to be a casual vacancy.

['(3) यदि भारत डोमिनियन की संविधान सभा का कोई सदस्य 1949 के अक्तूबर के छठे दिन अथवा तत्पश्चात् इस संविधान के प्रारंभ से पहले किसी समय किसी राज्यपाल-प्रांत अथवा प्रथम अनुसूची के भाग 3 में फिलहाल उल्लिखित किसी राज्य के तत्स्थानी किसी देशी राज्य के विधानमंडल के सदन का सदस्य अथवा किसी ऐसे राज्य का मंत्री था अथवा बन जाता है तो इस संविधान के प्रारंभ की तारीख से लेकर संविधान सभा में ऐसे सदस्य का स्थान, यदि उसका उस सभा का सदस्य होना इससे पहले ही समाप्त न हो गया हो, रिक्त हो जाएगा तथा प्रत्येक ऐसी रिक्तता आकस्मिक रिक्तता समझी जायेगी।' "]

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधित संख्या 9 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (3) के पश्चात् यह नवीन खंड अंत:स्थापित किया जाए:

'(3a) Notwithstanding that any such vacancy in the Constitution Assembly of the Dominion of India as is mentioned in Clause (3) of this article has not occurred under that clause, steps may be taken before the commencement of this Constitution for the filling of such vacancy, but any person chosen before such commencement to fill the vacancy shall not be entitled to take his seat in the said Assembly until after the vacancy has so occurred."

['(3क) इस बात के होते हुए भी कि भारत डोमिनियन की संविधान-सभा में ऐसी कोई रिक्तता, जैसीकि इस अनुच्छेद के खंड (3) में वर्णित है, उस खंड के अधीन नहीं हुई है, इस संविधान के प्रारंभ से पहले ऐसी रिक्तता की पूर्ति के लिए पग उठाया जा सकेगा, किंतु ऐसे प्रारंभ से पहले उस रिक्तता की पूर्ति के लिए चुने हुए किसी व्यक्ति को उक्त सभा में अपना स्थान ग्रहण करने का हक तब तक न होगा जब तक कि रिक्तता इस प्रकार न हो जाये।' "]

इस खंड का उद्देश्य यह है कि अंतर्कालीन संसद गठित करने के समय उस बात को समाप्त किया जाए जिसे कि दोहरी सदस्यता की संज्ञा दी जाती है।

अन्य उपबंध केवल आनुषंगिक है।

***श्री एच.वी. कामत:** महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311 में, 'until (जब तक कि)' **शब्द के स्थान पर** 'until such time (ऐसे समय तक जब कि)' **शब्द रखे जाएं।**"

[श्री एच.वी. कामत]

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311 में 'the body functioning as' **शब्द निकाल दिये जाएं।**"

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311 में, 'Constituent Assembly of the Dominion of India' (भारत डोमिनियन की संविधान सभा)' **शब्दों के स्थान पर,** जहां कहीं भी वे आए हैं, 'Constituent Assembly of India (भारतीय संविधान सभा)' **शब्द रखे जाएं।**"

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 में (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (1) में, immediately before the commencement of this Constitution shall (इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले)' **शब्दों के स्थान पर** 'shall itself (स्वयं)' **शब्द रखे जाएं।**"

मैं संशोधन संख्या 147 प्रस्तुत नहीं करूंगा।

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधित संख्या 9 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (2) में rules (नियमों) **शब्द के पश्चात्** 'which shall as far as practicable conform to those adopted by the Constituent Assembly (जो यथासाध्य संविधान सभा द्वारा अंगीकृत नियमों के अनुरूप होंगे।' **शब्द अंत:स्थापित किए जाएं।**"

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (3) में, 'an Indian State (देशी राज्य)' शब्दों के पश्चात् 'or Union of States (अथवा राज्यों के संघ)' **शब्द अंत:स्थापित किए जाएं।**"

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (4) में, 'or Deputy Speaker (अथवा उपाध्यक्ष)' **शब्द निकाल दिये जाएं।**"

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में, प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (4) में, 'or, as the case may be the Deputy Speaker (या यथास्थिति उपाध्यक्ष)' **शब्द निकाल दिये जाएं।"**

यदि खंड (1) जो कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) में उल्लिखित है, के लिए संशोधन सभा को स्वीकार्य हों, तो इस खंड का पाठ निम्न प्रकार होगा:

"Until such time as both Houses of Parliament have been duly constituted and summoned to meet for the first session under the provisions of this Constitution, the Constituent Assembly of India shall itself exercise all the powers and perform all the duties conferred by the provisions of this Constitution on Parliament."

["ऐसे समय तक जब तक कि संसद के दोनों सदन इस संविधान के उपबंधों के अंतर्गत सम्यक रूप से गठित न हो जायें तथा प्रथम सत्र में अधिवेशित होने के लिए आहूत न हो जायें तब तक भारत की संविधान सभा इस संविधान के उपबंधों द्वारा संसद को प्रदत्त सभी शक्तियों का प्रयोग तथा कर्तव्यों का पालन स्वयं करेगी।"]

पहला संशोधन केवल शाब्दिक है क्योंकि इससे मात्र वाक्यांश में परिवर्तन होता है ताकि यह संवधौनिक भाषा के अधिक अनुरूप बन जाए। मेरे विचार में "जब तक" कहने के बजाए "ऐसे समय तक जबकि" कहना बेहतर है। तथापि मैं इसे प्रारूप समिति के सामूहिक विवेक पर छोड़ता हूं कि वह उचित समय पर इसके संबंध में कार्यवाही करे।

जहां तक संशोधन संख्या 143 का संबंध है, यह अंशत: शाब्दिक है तथा अंशत: सारवान है। मैं यह समझने में असफल हूं कि इस सभा का उल्लेख इस जटिल तरीके से क्यों किया जाए, अर्थात् "इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले भारत डोमिनियन की संविधान सभा के रूप में कृत्यकारी निकाय..."। इस अनुच्छेद का प्रारूप जैसा कि वह मूलत: था अधिक सख्त था। जहां तक "भारतीय डोमिनियन की संविधान सभा" शब्दों का संबंध है, मेरा विचार है कि यहां भी "डोमिनियन की" शब्दों का लोप किया जा सकता है और यह लाभदायक भी रहेगा तथा सही भी। यदि इस सदन में मेरे माननीय सहयोगी इस पुस्तक अर्थात् संविधान का प्रारुप के मुखपृष्ठ को देखने का कष्ट करें तो वे पाएंगे कि इस सभा का उल्लेख "भारतीय संविधान सभा" के रूप में किया गया है तथा "भारतीय डोमिनियन की सभा" के रूप में नहीं। मैं नहीं जानता कि कुछ माननीय सदस्य इस शब्द "डोमिनियन" के हर समय प्रयोग में क्यों रुचि रखते हैं। निस्संदेह, जहां कहीं भी अधिनियमन में यह आवश्यक हो, तब तो इसका प्रयोग किया जा सकता है। उससे मेरा कोई झगड़ा नहीं है। जहां कहीं किसी खंड अथवा अनुच्छेद के अर्थ में कोई बात बिगाड़े बिना इसे हटा दिया जा सकता है, वहां मेरी समझ में नहीं आता कि हम इस शब्द डोमिनियन, डोमिनियन, डोमिनियन का ढोल क्यों पीटते रहते हैं। यह संविधान सभा वास्तव में देखा जाए तो एक स्वतंत्र देश की विधान सभा है। दुर्भाग्यवश अथवा घटनावश, हमारे देश में परिस्थितियों ने ऐसी चाल चली है कि भारत के पूर्ण रूप से स्वाधीन होने के पूर्व ही हमें संविधान सभा बुलानी पड़ी। ऐतिहासिक रूप से देखा जाए तो किसी देश के विदेशी शासन की बेड़ियों से मुक्त होने के पश्चात् ही संविधान सभा बुलाई जाती है। हमने इस सभा द्वारा बनाए गए नियमों—प्रक्रिया नियम तथा स्थायी आदेशों—में स्वयं भारतीय संविधान सभा का

[श्री एच.वी. कामत]

उल्लेख किया है और पहले ही नियम में कहा गया है "इन नियमों में जब तक कि प्रसंग से अन्यथा अपेक्षित न हो, सभा का अर्थ है भारतीय संविधान सभा"। अत: इस प्रसंग में "डोमिनियन" शब्द के प्रयोग का कोई अधिकार क्षेत्र अथवा आवश्यकता नहीं है तथा इसे तर्कसंगत रूप से और विवेकपूर्वक पूर्णत: निकाला जा सकता है और इससे इस खंड के उस अर्थ में कोई भी बिगाड़ नहीं आयेगा जिसे व्यक्त करने का इसका आशय है।

इसके अलावा, महोदय, मेरी असली आपत्ति इस खंड में विद्यमान जटिल शब्दावली के बारे में है: "इस संविधान के प्रारूप से ठीक पहले भारत डोमिनियन की संविधान सभा के रूप में कृत्यकारी निकाय" मुझे नहीं मालूम कि मूल प्रारूप में परिवर्तन करके इसे क्यों समाविष्ट किया गया है। यदि मेरे माननीय मित्र अनुच्छेद 311 के खंड (1) को देखने का कष्ट करें, जैसा कि यह खंड मूलत: था, तो वे पाएंगे कि इसका उल्लेख "भारत डोमिनियन की संविधान सभा" के रूप में हैं। मैं पहले ही कह चुका हूं कि "डोमिनियन की" शब्द निकाल दिये जाने चाहिएं। अब मैं यह कहता हूं कि इसे और भी अधिक सरलता से भारतीय संविधान सभा कहा जा सकता है। यदि प्रारूप समिति का यह विचार है कि क्योंकि एक सौ से कुछ अधिक स्थानों के रिक्त घोषित किए जाने की संभावना है और इसलिए इस निकाय के उल्लेख में यह परिवर्तन आवश्यक है, तो मैं समझता हूं कि वे गलतफहमी के शिकार होकर यह काम कर रहे हैं। जब तक कि इस निकाय को भंग नहीं किया जाता यह भारतीय संविधान सभा के रूप में जारी रहेगा। यदि बहुत भारी संख्या में सदस्य इस सभा से त्यागपत्र भी दे देते हैं और चाहे उनके स्थान भरे जायें अथवा नहीं, यह वही पुरानी सभा रहेगी जिसे कि सदैव ही भारतीय संविधान सभा कहा जाता रहा है। जब तक कि यह भंग नहीं कर दी जाती सांविधानिक भाषा में इसका उल्लेख भारतीय संविधान सभा के रूप में ही जारी रहेगा। अत: यदि ऐसी कोई गलतफहमी है कि एक सौ से अधिक सदस्यों द्वारा त्यागपत्र दिए जाने के कारण इस निकाय का उल्लेख इस तरीके से किया जाना चाहिए तथा केवल भारतीय संविधान सभा के रूप में नहीं तो उस गलतफहमी का तनिक भी कोई औचित्य नहीं है, तथा यदि हम इसका उल्लेख केवल भारतीय संविधान सभा के रूप में करें तो हम इस निकाय का नाम गलत रूप में नहीं ले रहे होंगे। चाहे एक सौ सदस्य त्यागपत्र दें अथवा इनसे अधिक, संविधान के प्रारंभ होने के समय तक इस निकाय को भारतीय संविधान सभा ही कहा जाता रहेगा। अत: संशोधन संख्या 143, 144 तथा 145 द्वारा जोकि एक साथ हैं, मैं इस अनुच्छेद के खंड (1) में समाविष्ट शब्दों तथा वाक्यांशों को सरल बनाना चाहता हूं ताकि हम स्वयं भारतीय संविधान सभा के लिए ही यह उपबंध करें कि यह इस संविधान के उपबंधों द्वारा संसद को प्रवत्त सभी शक्तियों को निर्वहन तथा कर्तव्यों का पालन करेगी। संविधान के एक बार प्रवर्तन में आ जाने पर निस्संदेह संविधान के अंतर्गत यह सभा अंतर्कालीन संसद कहलाएगी। उस समय तक "अमुक-अमुक रूप में कार्य करने वाला निकाय" कहने की आवश्यकता नहीं है। हमारे प्रयोजनों के लिए "भारतीय संविधान सभा" ही कहा जाना पर्याप्त है। मुझे आशा है कि प्रारूप समिति के सदस्य, जो कि "डोमिनियन" शब्द के प्रयोग के प्रति अनुराग रखते हैं और हमारे प्रयोजन के लिए आवश्यकता से अधिक शब्दों का प्रयोग करने का चाव रखते हैं, वे मेरे इन संशोधनों के तर्क-बल को देखेंगे और इस खंड की शब्दावली को सरल बनायेंगे।

अब मैं खंड (2) पर आता हूं। मैं संशोधन संख्या 147 प्रस्तुत नहीं करना

चाहता। मैं केवल संशोधन संख्या 148 प्रस्तुत करता हूं:

> "कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 9 में प्रस्तावित अनुच्छेद 311 के खंड (2) में, 'rules (नियमों)' **शब्द के पश्चात्** 'which shall as far as practicable, conform to those adopted by the Constituent Assembly (जो यथासाध्य संविधान सभा द्वारा अंगीकृत किए गए नियमों के अनुरूप होंगे)' **शब्द अन्तःस्थापित किए जाएं।**"

खण्ड (2) में उन कुछ नियमों का उल्लेख है जो कि राष्ट्रपति इस अंतरिम संसद में, अर्थात् जब यह सभा हमारी अंतरिम संसद मे परिवर्तित कर दी जाती है अथवा पुनर्गठित कर दी जाती है, प्रतिनिधित्व के लिए बना सकता है। इस खंड में अंतर्कालीन संसद में भारत के उन राज्यों अथवा अन्य राज्य क्षेत्रों के प्रतिनिधित्व के लिए उपबंध है जिनका कि अब तक कोई प्रतिनिधित्व नहीं था। सदन इस बात से अवगत है कि भोपाल के प्रतिनिधि ने अभी तक इस सभा में अपना स्थान ग्रहण नहीं किया है हालांकि फरमान जारी हो चुका है कि वह यथाशक्य शीघ्र यहां पहुंचे। हम आशा करते हैं कि वह इस संविधान के तीसरे वाचन के दौरान हमारे बीच होगा या होगी। हैदराबाद का भी अभी तक कोई प्रतिनिधि यहां नहीं है। हमें नहीं मालूम कि क्या अब तक किए जा चुके उपाय सफल होंगे ताकि हम हैदराबाद से आने वाले अपने मित्र का इस सभा में तीसरे वाचन के दौरान स्वागत कर सकें। निस्संदेह, जब यह सभा स्वयं को अंतर्कालीन संसद में परिवर्तित कर लेगी, तो मुझे विश्वास है कि राष्ट्रपति इस सभा में हैदराबाद के प्रतिनिधित्व के लिए भी नियमों द्वारा उपबंध करेगा। इसी प्रकार विन्ध्य प्रदेश नाम से देशी राज्यों का संघ भी है जिसका कि अभी इस सभा में कोई प्रतिनिधित्व नहीं है। महोदय, गत अधिवेशन के दौरान आपने हमें यह बताने की कृपा की थी कि संविधान सभा के सचिवालय में विन्ध्य प्रदेश के राजप्रमुख तथा उसके मुख्य मंत्री या रीजनल कमिश्नर से कहा है कि वह इस सभा में विन्ध्य प्रदेश के लिये आवश्यक कदम उठाये। मैं नहीं जानता कि विन्ध्य प्रदेश के मामले में इस बारे में कितनी प्रगति हुई है। हमें आशा है कि प्रतिनिधि अगले सत्र के दौरान जोकि इस सभा का अंतिम सत्र होगा, हमारे बीच होंगे। बहरहाल, मुझे विश्वास है कि जब अगले वर्ष अंतरिम संसद बैठक के लिए समवेत होगी तो वे यहां अपने-अपने स्थान ग्रहण करेंगे। महोदय, जहां तक उन बातों का संबंध है जिनका कि यहां अभी तक कोई प्रतिनिधित्व नहीं है, मुझे इतना ही कहना है।

अब इस खंड (2) में राष्ट्रपति द्वारा नियम बनाए जाने के लिये उपबंध है। सदन को भली प्रकार ज्ञात है कि इस सभा ने देशी राज्यों तथा अन्य यूनिटों के इस सभा में प्रतिनिधित्व के संबंध में कुछ नियम अंगीकृत किए हैं। मैं इस सभा के नियमों, जिन्हें कि हमने मेरे विचार में गत वर्ष किसी समय अंगीकृत किया था के नियम 51 का उल्लेख करता हूं। नियम 51 के अंतर्गत हमने एक अनुसूची भी अंगीकृत की है। उस अनुसूची में इस सभा में राज्यों के प्रतिनिधित्व के बारे में उपबंध है। मेरा संशोधन संख्या 148 हमारे द्वारा बनाए गए नियमों की ओर निर्देश करता है जो कि उस पुस्तिका में समाविष्ट किए गए हैं जो सचिवालय द्वारा सभी सदस्यों को उपलब्ध कराई गई है, अर्थात् प्रक्रिया नियम तथा स्थायी आदेश। कुछ ऐसे नियम हैं जो कि इस सभा में राज्यों के प्रतिनिधित्व के लिए बनाए गए हैं, जैसाकि मैंने पहले भी कहा। मेरे संशोधन का आशय यह व्यवस्था करना है कि जहां तक संभव हो, जहां तक व्यवहार्य हो, राष्ट्रपति के नियम उन

[श्री एच.वी. कामत]

नियमों के अनुरूप होंगे जो कि यह सभा गत वर्ष के दौरान पहले ही अंगीकृत कर चुकी है। हो सकता है कि कुछ राज्यों में कुछ ऐसी परिस्थितियां पैदा हो जाएं जो कि पहले अंगीकृत किये जा चुके उन नियमों के अनुरूप रहने में राष्ट्रपति के मार्ग में बाधक हो। यही कारण है कि मैंने "यथासाध्य" शब्द समाविष्ट किया हैं। मैं आशा करता हूं कि डॉ. अम्बेडकर, प्रारूप समिति तथा इन सदन में मेरे माननीय सदस्य इस संशोधन को स्वीकार करने के लिए इसके कारणों से आश्वस्त होंगे, क्योंकि आखिरकार इसका संबंध उस विषय से है जिस पर कि सदन पहले ही निर्णय ले चुका है और मुझे इसका कोई कारण दिखाई नहीं देता कि जहां यह व्यवहार्य है वहां राष्ट्रपति उन नियमों से परे क्यों चले जिन्हें कि यह सभा पहले ही अंगीकृत कर चुकी है।

अब मैं संशोधन संख्या 155 पर आता हूं जो कि लगभग शाब्दिक संशोधन है। मेरा विचार है कि यह विषय प्रारूप समिति के ध्यान से तनिक बाहर रहा है। खंड (3) में राज्यपाल के प्रांत अथवा देशी राज्य का उल्लेख है। सदन को ज्ञात है कि हमारे यहां केवल देशी राज्य ही नहीं हैं परन्तु वे राज्य भी हैं जिन्हें कि राज्यों के संघ की संज्ञा दी जाती है। मैं अपने इस संशोधन द्वारा यह वाक्यांश भी समाविष्ट करना चाहता हूं ताकि इसका पाठ निम्नलिखित प्रकार का हो जाए:

"राज्यपाल—प्रांत अथवा देशी राज्य अथवा राज्यों के संघ का विधानमंडल।"

"मध्य भारत तथा राजस्थान राज्यों के संघ हैं, मात्र देशी राज्य नहीं। मेरे विचार से बिल्कुल सही होने के लिए हमें "देशी राज्यों" के अलावा "राज्यों के संघ" वाक्यांश को भी अवश्य रखना होगा।

इसके बाद, जहां तक इस खंड (3) के प्रारूप का संबंध है जो कि हमें आज प्रातः मिला, मेरे पास संशोधनों की सूचनायें भेजने का समय नहीं था परंतु मैं प्रारूप समिति तथा सदन का ध्यान उस बात की ओर दिलाना चाहूंगा जो कि मैंने मंत्रियों के विवरण के संबंध में परसों उठाई थी। एक अनुच्छेद में, जिसे कि हमने दो दिन पहले स्वीकार किया था, मंत्रियों का उल्लेख भारत डोमिनियन के लिए मंत्रियों के रूप में किया गया है। मेरे विचार में यह गलत तथा अशुद्ध अभिव्यक्ति थी और उसी तर्क पर चलते हुए मेरा विचार है कि यहां मंत्री का उल्लेख "किसी देशी राज्य का मंत्री" के रूप में किया जाना अधिक ठीक होगा, बनिस्बत इसके कि "किसी देशी राज्य के लए मंत्री" के रूप में उल्लेख किया जाए।

अंत में इसी खंड में मैं लगभग अंतिम पंक्ति में एक बहुत ही लघु शाब्दिक संशोधन का सुझाव देना चाहता हूं। मसौदे का पाठ इस प्रकार है:

"यदि इससे पूर्व उस सभा की उसकी सदस्यता समाप्त न हो गई हो।"

मेरे विचार में "उस सभा" के बजाए "सभा" कहना ही पर्याप्त रहेगा। यह बिल्कुल शाब्दिक संशोधन है तथा मैं इसे प्रारूप समिति के विवेक पर छोड़ता हूं।

इसके पश्चात् मैं अंतिम संशोधन (6) तथा 162 पर आता हूं। यदि सदन द्वारा ये संशोधन स्वीकार कर लिए जाते हैं, तो खंड (4) का पाठ निम्न प्रकार से होगा:

"Any person holding office immediately before the commencement of this Constitution as Speaker of the Constituent Assembly when functioning as Dominion Legislature under the Government of India Act, 1935, shall continue to be the Speaker of the Provisional Parliament functioning under clause (1) of this article."

["इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले कोई व्यक्ति जो भारत शासन अधिनियम 1935 के अधीन डोमिनियन विधानमंडल के रूप में कृत्यकारिणी संविधान सभा के अध्यक्ष के रूप में पदस्थ था इस अनुच्छेद के खंड (1) के अधीन कृत्यकारिणी अंतर्कालीन संसद का अध्यक्ष बना रहेगा।"]

मैं उपाध्यक्ष के उल्लेख को हटाना चाहता हूं। अध्यक्ष महोदय, मुझे आशा है कि इसे व्यक्तिगत रूप में अथवा इस सभा के किसी सदस्य पर व्यक्तिगत आक्षेप के रूप में नहीं लिया जाएगा। कुछ दिन पूर्व जब डॉ. अम्बेडकर ने राज्य विधान मंडलों के संबंध में नए अनुच्छेद प्रस्तुत किये तो उन खंडों में से एक में केवल विधानमंडल के अध्यक्ष का ही उल्लेख था। इस संबंध में मुझे उपाध्यक्ष के लोप की ओर ध्यान दिलाने का अवसर मिला। उस अनुच्छेद में केवल विधान सभा के अध्यक्ष तथा उपरि सदन के सभापति का ही उल्लेख था। तब मैंने अवर सदन के उपाध्यक्ष तथा उपरि सदन के उप-सभापति का उल्लेख न होने की ओर ध्यान आकर्षित किया था, हालांकि संविधान में राज्यों के विधानमंडलों से संबंधित अध्याय में उनका निश्चित उल्लेख है इसके अलावा, आज भी हमारे यहां अनेक प्रांतों में उपाध्यक्ष हैं और यही कारण था कि मैं उपाध्यक्ष का उल्लेख भी समाविष्ट करना चाहता था परंतु अपनी ऊंची उड़ान भरते रहे अथवा अपने एकांत में खोये रहे अथवा शायद इस लिए कि वह इस विषय में गंभीरता से सोचने के इच्छुक नहीं थे—मुझे नहीं मालूम कि क्या कारण था—डॉ. अम्बेडकर ने मेरे द्वारा उठाई गई बात का उत्तर तक देने की परवाह नहीं की। अब मैं देखता हूं कि उन्होंने मेरे द्वारा उठाए गई बात को स्वीकार कर लिया है तथा देर आयद दुरूस्त आयद के सिद्धांत पर मैं इससे सहर्ष सहमत हो सकता था परंतु आज कठिनाई यह है कि आप पहले ही दो दिन पूर्व एक अनुच्छेद पास कर चुके हैं जिसमें कि जहां तक राज्य विधानमंडलों का संबंध है केवल अध्यक्ष का ही उल्लेख है तथा उपाध्यक्ष का नहीं और आज संसद के संबंध में एक अनुच्छेद आया है और उसमें हम देखते हैं कि अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष दोनों का उल्लेख है। यदि डॉ. अम्बेडकर अथवा प्रारूप समिति राज्यों के संक्रमणकालीन विधानमंडलों के संबंध में सुधार करने का आश्वासन देते हैं जिससे कि उपाध्यक्ष का भी उल्लेख किया जा सके और संक्रमणकालीन अवधि के दौरान उपाध्यक्ष एवं उप-सभापति के बने रहने की व्यवस्था की जा सके तब तो निस्संदेह, अनुरूपता के लिए यह अपेक्षित है कि यह अनुच्छेद उसी रूप में पास किया जाये जिसमें कि यह है। परंतु डॉ. अम्बेडकर सभी समय अनुरूपता के बारे में विशेष ध्यान नहीं देते और वह यह कह सकते हैं कि जहां तक संसद का संबंध है, वह चाहेंगे कि उपाध्यक्ष का उल्लेख हो क्योंकि शायद वह हममें से एक हैं। परंतु जहां तक राज्य विधानमंडल का संबंध है, "आंख ओझल, पहाड़ ओझल" के आधार पर हो सकता है कि वह राज्य विधानमंडल के उपाध्यक्ष के उल्लेख के बारे में विशेष ध्यान न दें। तथापि, हम जो कुछ भी करें उसमें

[श्री एच.वी. कामत]

हमें यथासंभव एकरूपता सुनिश्चित करनी चाहिए। यदि हमने उपाध्यक्ष का उल्लेख किया है तो हमें राज्य विधानमंडल में भी उसका उल्लेख करना चाहिए और यदि हम ऐसा न करें तो हमें इस अनुच्छेद से भी उसे निकाल देना चाहिए। परमात्मा की खातिर अथवा कम से कम इस सदन की खातिर हमें इन छोटी-मोटी बातों में एकरूपता रखनी चाहिए। जीवन की बड़ी बातों में हम भले ही इस प्रकार के न हों परंतु जहां तक छोटी-छोटी बातों का संबंध है एकरूपता रखने में कोई कठिनाई नहीं है और इसलिए मैं आशा करता हूं कि मेरे ये संशोधन डॉ. अम्बेडकर समेत इस सदन को पसंद आएंगे।

इसके पश्चात् सभा मंगलवार, 11 अक्तूबर, 1949 के दस बजे तक के लिए स्थगित हुई।

———————